बज्जुर हैं
छाती
किसान की
श्रीचन्द्र जैन
आत्माराम एण्ड संस, दिल्ली-6

BAJJUR HAI CHHATI KISAN KI

by

Shri Chandra Jain

Rs. 3 00

प्रकाशक
रामलाल पुरी, संचालक
आत्माराम एण्ड संस
काश्मीरी गेट, दिल्ली-6

शाखाएँ
हौज खास, नई दिल्ली
चौड़ा रास्ता, जयपुर
विश्वविद्यालय क्षेत्र, चण्डीगढ़
महानगर, लखनऊ-6
रामकोट, हैदराबाद

मूल्य : तीन रुपए
प्रथम संस्करण, 1964

मुद्रक
हिन्दी प्रिंटिंग प्रेस
दिल्ली

भारतीय लोक-साहित्य के मर्मज्ञ
स्वर्गीय पूज्य पं० रामनरेशजी त्रिपाठी
को
सादर

दो शब्द

किसान हमारे देश का विभूति है। यही आदि-मानव हमारी सभ्यता और संस्कृति का मेरुदण्ड है। इसके श्रम से आज हम जीवित है। राष्ट्रीय चेतना का प्रतीक किसान है। इसकी भुजाओ मे जो बल है, जो उत्साह है और जो कर्मठता है वही विश्व को विपत्तियो से बचा रही है। देश-भक्ति का अर्थ है देश की मिट्टी से मोह। किसान सच्चा राष्ट्रभक्त है। इसकी ममता मिट्टी के कण-कण से है। वह तो मिट्टी की गोद मे हमेशा खेलता रहता है। उसका जन्म मिट्टी में हुआ है और उसकी मृत्यु मिट्टी में ही होगी। मृत्तिका से इतना घनिष्ठ सम्बन्ध तो इसी पृथ्वी-पुत्र किसान का है।

ग्राम-धर्म की आत्मा किसान है और यही ग्राम-स्वराज्य का आदि देवता है। इसीलिए चिरकाल से इस विरक्त परोपकारी मानव की साधना प्रशंसित हो रही है। इसकी प्रशस्ति मे मानवता का स्तवन है। इसकी गाथा मे जन-जन की भावना सप्राण बनती है। निश्चयतः किसान हमारी शक्ति का केन्द्र है और जागृति की ज्योति है। इस पुस्तक के निबन्ध धरती और धरती के लाल की गरिमा से सम्बन्धित है। आशा है लोक-साहित्य-प्रेमियो को ये आनन्द देंगे।

मै उन सब सुधी लेखकों और कवियो का आभारी हूँ, जिनकी रचनाओ से मैंने सहायता ली है और इन निबन्धो को विशेष उपयोगी बनाया है। 'ग्राम-सुधार' के विद्वान् सम्पादक के प्रति भी मैं अपनी कृतज्ञता प्रकट करता हूँ, जिन्होंने अपने साप्ताहिक मे मेरे प्रकाशित प्रथम पाँच निबन्धों को पुस्तक मे सगृहीत करने की अनुमति प्रदान की है। मैं कविवर पं० घनश्यामजी पाण्डेय का कृतज्ञ हूँ जिन्होंने स्वरचित बारहमासी को इस रचना मे सम्मिलित करने की स्वीकृति दी है।

क्रम

1
बज्जुर है छाती किसान की

जीवन के संघर्षों को साहसी बनकर सहन करने वाले किसान की छाती वज्र की बनी हुई है। उसकी सहनशक्ति अपरिमित है। उसने सब कुछ सहा, लेकिन अपनी आत्मा को न बेचा। युग-युग के शासकों ने उसे सताया, उसकी आय को छीना और उसके काँपते हुए अस्तित्व को दबाया, लेकिन वाह रे तपस्वी किसान! तेरी साधना भगवान् शकर के ही समान है। तूने उसे ही अपनाया, जिसने तुझे मिटाने का प्रयत्न किया। तू स्वयं भूखा रहा, लेकिन दूसरों का स्वागत तूने मोहन-भोग से किया। आज भी तू परोपकार मे रत है। जेठ और बैशाख की बरसती हुई आग में तू कब चैन से बैठता है। जब मानव हतोत्साह होता है तब तू ही उसे अपने बहते हुए पसीने की बूंदों से धैर्य बँधाता है। घनघोर वर्षा मे जब बिजली चमकती है और आसमान मौन हो जाता है तब तू नंगे पैरों से खेतो में फिरता है और अपनी धरती माता की सेवा मे अपना सब कुछ अर्पित कर देता है। तू इसी-लिए ही तो लँगोटी बाँधता है कि जिससे ससार वस्त्रहीन न रह सके। तू इसीलिए सतुआ चाटता है कि जिससे यह दुनिया मोहन-भोग खाए। तू स्वयं झोंपड़ी में रहता है और दूसरों के लिए महल बनाता है। तू अपने शरीर को सुखाकर और हड्डियों को झुकाकर सदैव से संसार के अस्तित्व को बचा रहा है। धन्य है तेरी सेवा और धन्य है तेरी कामना! तेरे त्याग और बलिदान से प्रसन्न होकर पूज्य बापू ने कहा था कि हमारे स्वतत्र भारत का राष्ट्रपति किसान ही बनेगा। हे पृथ्वी के प्यारे पुत्र किसान! तू अजर और अमर है। तू ही अन्नदाता है और तू ही हमारा सच्चा देवता है। तेरे पैरों मे युग की शक्ति है और तेरे हाथो में विश्व की महानता छिपी हुई है। तू ही हिन्दुस्तान है और तू ही हमारे देश की आन-बान है।

किसान का व्यक्तित्व पाषाण के समान कठोर और गेहूँ की बाल के समान श्री-सम्पन्न है। वह खेत की मिट्टी में मिलकर सोना बनता है और दूसरों की गरीबी

को मिटाता है। निम्नस्थ पंक्तियों में कृषक की प्रतिमा अंकित की गई है—

बाँध कुदारी खुरपी हाथ, जो लाठी का राखै साथ।
काटै घास निराबै खेत, बहै किसान करै निज हेत।।
जो अपने हाथे फरुहा लइके, खेत मा डारै माटी।
ते करें घर मा कमला देवी, बइठे पारै पाटी।।

जिस प्रकार चातक मेघ से अपना स्नेह जोड़ता है उसी प्रकार कृषक का अपनत्व धरती मैया से है। अकाल-पीड़ित किसान विह्वल हो उठता है। फिर भी वह अपनी जमीन से सम्बन्ध विच्छेद नही करता। संसार के सन्ताप से सब हारे, लेकिन तूने ही छाती तानकर विश्व की विभीषिकाओं को ललकारा, महर्षि दधीचि को तूने ही अपनी हड्डियाँ दी थी। किसान, तू धन्य है।

कुछ बुन्देलखण्डी लोकगीतों में अकालो से सतप्त किसान का करुण-क्रदन चित्रित हुआ है जिसे पढ़कर मानवता भी सिसकियाँ भरने लगती है। फिर भी किसान अपने खेत की मिट्टी को मस्तक पर लगाता ही रहता है। फसल खराब हो गई है। लगान की चिन्ता भूत बनकर किसान को डरा रही है, फिर भी वह ईमान की रक्षा करना चाहता है—

हमारी कैसे चुकत तिहाई।
मेंड़न-मेंड़न हम फिर आए, डीमा देत दिखाई।
हाय, कैसे चुकत तिहाई।।
छोटी-छोटी बाल कड़ी नरबाई रई फरमाई।
हमारी कैसे चुकत तिहाई।
माँते ज़िमींदार को आयो बुलउआ, को आ करत सहाई।
हमारी कैसे चुकत तिहाई।
टलियाँ-बधियाँ साहू ने लेलई, रे गई पास लुगाई।
हमारी कैसे चुकत तिहाई।।

परमात्मा की कोप-दृष्टि से व्याकुल होकर एक कृषक अपने खेत की मेंड़ पर बैठा हुआ भविष्य की कालिमा को देख रहा है। फिर-भी हताश नहीं है।

गिरुआ लग बैठो हत्यारो, नोनों गोऊँ हमारो।
काड़ मूंस के बीज बओ तो, किसत को टिल्लो टारो।।

भूखे-प्यासे हार में बैठे, मन आनन्द हमारो।
चना मसूर कुटी ने मारो, गोहूँ गिलका मारो॥
माघ पूष सब फागुन कड़ गए, बादर टरे न टारो।
का करिए अब कौन से कहिए, रूठो ऊपर बारो॥

किसानी मे अनेक उलझने रहती है। इन अडचनों को पार करना किसान ही जानता है। चिथड़ों से माघ मास की महावट को सहना और क्वार की घाम में देह को सुखा लेना कितना कठिन है यह तो हलधर ही समझ सकता है। कृषि वही कर सकता है जो उक्त कठिनाइयों को सह सके।

माघ मास की झिर सहै, और क्वॉर कौ घाम।
पानी डबरन को पियै, करै किसानी काम॥

धरा धन से परिपूर्ण है, इसीलिए इसे वसुधरा कहा गया है, लेकिन धरिणी से वही वैभव प्राप्त कर सकता है जो किसान के समान कष्ट-सहिष्णु हो। सुकुमारों के लिए पृथ्वी कठोर हृदया है। उसकी पूजा कष्ट-साध्य है, लेकिन सफल पुजारी किसान ही है जो एक बार पृथ्वी माता की कुटिल भृकुटि पर भी रीझता है और श्री रघु वीर की आशा करता हुआ उस विश्वपालिका से वरदान पा ही लेता है। फागुन में एक दुखी किसान गुनगुना रहा था—

जियरा सूख गए खटका में।
अरे मोड़ा-मोड़ी रोटी माँगे, नाज नहीं मटका मे।
जिनके घर के नाज बडा गए, मठा पिएँ अटका मे।
उन्ना फट गए, कपड़ा फट गए, दिन काटें फडका मे॥
माँगे उधार देत कोऊँ नइयाँ, दिल ना सटे अटका में।
तुलसीदास आस रघुवर की, प्राण चले अटका में॥

किसान-पत्नी ने अपने प्राणसंगी के भावों को समझा और वह झूमकर गा उठी—

खेती कर लो छैल बैल लेदऊँ,
खेती कर लो।
जब ओ खेतीमे टोटो पर गओ,
बीजें बेच अमल दे दऊँ,
खेती कर लो।

जब ओ खेती मे टोटो री पर गओ,
ठुसी बेच अमल मे दे दऊँ,
खेती कर लो।

अपने कर्मठ कंधे पर हल को रखे हुए जब किसान अपने बैलों के साथ खेत की ओर बढता है तो उसका हृदय उल्लास से भर जाता है।

अन्न ही प्राण है और किसान ही रसमय प्राणो का स्रष्टा है। परमात्मा की कुदृष्टि होने पर अन्न ही हमारी सहायता करता है। श्री बेड़ेरिया ने ठीक ही कहा है—

कोऊ काम न आइ है, धन अनेक धन जाय।
परमेश्वर जा दिन कुरुख, तादिन अन्न सहाय ॥

दतिया के लोककवि श्री वजीर ने किसान की प्रशस्ति मे खूब लिखा है—

सब से बज्जुर है छाती किसान की,
खबर नही रहै जान की।
ठनको काश्तकार कौ सीना,
जब से लागो जेठ महीना।
टपकै एडी तलक पसीना,
खाद, कूरे मे भूली सुध प्रान की।
खबर नही रहै जान की।
गाड़ी भर-भर के लै जावे,
चाहे लपट भलई लग जावे।
ठंडी चीज कभी नहिं खावे,
जौ हिम्मत तो देखो बलवान की।
खबर नही रहै जान की।
करके बैला की जब सानी,
रोटी लएँ ठाड़ी सवरानी।
ठडौ चपिया में भर पानी,
सूखी रोटी पै जिन्दगानी किसान की।
खबर नही रहै जान की।

षिकृ-प्रधान देश भारत मे कृषक हमारा आराध्य है। उसकी वदना ईश्वर

की आराधना है। उसकी कहानी मानव की कथा है। उसके जीवन मे ही संसार की गाथा गुम्फित है। उसकी साधना जन-जन की भाग्य-रेखा है। अब समय ने नया मोड़ लिया है। हमारे किसान की भाग्यलिपि मे परिवर्तन हो चुका है। पूज्य बापू की तपस्या से कृषक का दैन्य नष्ट हो रहा है। हमारी सरकार किसान की गरिमा को समझ चुकी है और वह इस कर्मयोगी पृथ्वी-पुत्र को सुखी और समृद्ध बनाने के लिए पूर्ण रूप से सजग है।

2

बरधा है किसान को मीत

किसान की शक्ति बैल है। बैल के अभाव में किसान हिम्मत हार बैठता है। निराशा मे बैल ही अपने स्वामी किसान को आशा बँधाता है और गरीबी में उसका पूरा साथ देता है। लम्बे-लम्बे सफर बैलो के साथ ही किसान पूरे करता है। अपनी घटी बजा-बजाकर बैल अपने सोते हुए मित्र-किसान को जगाता है और आनेवाले सकट की सूचना देता है। किसान की आँखे बैल है। बैल ही किसान की भुजाएं है। बैलों के बल पर ही कृषक खेती करता है और अपने परिवार को पालता है। हट्टे-कट्टे बैलो को देखकर किसान फूला नही समाता है। वास्तव मे किसान का सच्चा मित्र बैल ही है। बेचनेवाला किसान अपने से दूर होनेवाले बैल का पैर छूता है और मोल लेने वाला किसान भी घर आए बैल का पैर छूकर स्वागत करता है। अखती तथा गोवर्धन-पूजा मे वृषभ की पूजा होती है। इस समय किसान भाई अपने जीवन-साथी बैल को अनेक रगो से चित्रित करते है और उसके सुन्दर मुँह को चूमकर अपना स्नेह प्रकट किया करते हैं। विपत्ति मे पड़े हुए अथवा उदास अपने स्वामी किसान को देखकर बैल अपनी आँखो से आँसू टपकाने लगता है। कृषक अपने मित्र बैल को भले ही भला-बुरा कह ले लेकिन वह यह नही सह सकता कि कोई दूसरा व्यक्ति उसकी देह को भी छू ले।

किसान के लिए बैल धन, वैभव, परिवार और समृद्धि सब कुछ है। इसीलिए किसान बैल को चुनने में बड़ा सतर्क रहता है। वर्षो के परिपक्व अनुभव के आधार पर बैलो के सम्बन्ध मे बहुत-सी बाते कही जाती है, जिनका पालन किसान भाई आज भी करते है। क्योंकि कई युग बीत जाने पर भी इनकी सच्चाई अशकित है।

यहाँ मै कुछ ऐसी कहावतो को उद्धृत कर रहा हूँ जिनमे अच्छे और बुरे बैलों के विषय मे कहा गया है।

जहवाँ देखिहा लोह बैंलिया ।
तहवाँ दीहा खोलि थैंलिया ।।

लाल रंग के बैंल को अवश्य खरीदना चाहिए ।

करिया काछी धौंरा बान।
इन्हे छाँडि जनि बेसह्यो आन॥

काली कच्छ वाले और सफेद बैल को मोल लेना हितकर है।

सीग मुड़े माथा उठा, मुँह का होवे गोल।
रोम नरम चचल करन[1] तेज बैल अनमोल।
हिरन मुतान और पतली पूँछ।
बैल बेसाहो[2] कत वे पूँछ[3]।
सेत[4] रग औ पीठ बरारी[5]।
ताहि देखि जिन[6] भूल्यो अनारी।
छोट सीग औ छोटी पूछ, ऐसा बरदा[7] लो वे पूँछ।
नील कधा बेगन खुरा, कभी न निकले कता बुरा।
छोटा मुँह औ ऐठा कान, यही बैल की है पहचान।
पूँछ झपाऔ छोटे कान, ऐसे बरद मेहनती जान।
बैल लीजै कजरा, दाम दीजै अगरा।
बैल तरकना[8] टूटी नाव, ये काहू दिन दै है दाँव[9]।
बड़सिगा[10] जनि लीजौ मोल।
कुएँ में डारो रुपया खोल॥
नासू[11] करै राज का नास।
घाघ कहै सुन बात हमारी।
बूढ बैल से भली कुदारी॥
बैल मरकहा[12] चमकुल जोय।
वा घर ओरहन[13] नित उठि होय॥
सरग-पताली मेंडा सिगी, कोडील उर फुला जटैला।
बँदरा डूड़ा औ सतदता, जानौ असल दगैला॥
पूछ-भार नगिनिया लखके, ब्यानौ छोड़ दीजियौ छैला।
भल न लिइयो, फटी खुरी कौ, कचनथ कद-कचैला।

---

1. कान। 2. मोल लेना। 3. बिना पूछे 4. सफेद। 5. दबी हुई। 6. मत। 7. बैल। 8. चमकनेवाला। 9 धोखा। 10. बडे सीग वाला। 11. कम पसलियों वाला बैल। 12. मारने वाला। 13. उलाहना।

बडी मुतौरू लम्बे कान, हर देखे से तजै पिरान।
करिया बरदा जेठरा पूत।
बड़े भाग सों होय सपूत।
डग मग डोलन, फरका फेरन[1],
कहाँ चले तुम बाँड़ा[2]।
पहिले खाइब रान-परोसी[3],
गोसैएँ[4] कब छाँडा।

किसान भाइयो को चाहिए कि वे शुभ लक्षण वाले बैलों को ही मोल ले, जिनसे उनकी खेती फूले-फले। शुभ चिह्नो से चिह्नित बैल को ही किसान का मित्र कहा गया है :

है बरधा किसान को मीत।
जो खेती में होय पुनीत।

श्री शुक्राचार्य ने अच्छे बैल के सम्बन्ध मे यों कहा है—

नाति क्रूर सुष्टष्ठश्च वृषभःश्रेष्ठ उच्यते।
त्रिशद्योजन गंतावा प्रत्यह भार वाहकः।

—शुक्रनीति, पृष्ठ 199

जो भार को ले चले, जो न अत्यन्त क्रूर हो और जिसकी पीठ सुन्दर हो वह बैल श्रेष्ठ कहा है, और जो प्रतिदिन तीन योजन भार को लेकर चल सके।

कृषि की सफलता बैलो पर ही निर्भर है अतः बलिष्ठ वृषभ ही धरती को शस्य-श्यामला बना सकते हैं। खेती को फलवती बनाने के इच्छुक किसान भाइयों को बैल पर्याप्त सख्या मे रखने चाहिएँ और उनको पुष्टिकर भोजन भी देना चाहिए। कमजोर बैलो की दयनीय दशा पर खेत भी रो उठता है। सुन्दर एवं सुडौल वृषभो को देखकर धरती माता प्रसन्न होती है और किसान के भाग्य को सराहती हुई उसके घर को धन-धान्य से भर देती है। अतः सुखी बनने वाले किसान भाइयों को अपने मित्र बैलो को सदैव सुखी रखना चाहिए।

---

1. छप्पर फेंकने वाला। 2. कटी पूँछ वाला बैल। 3. अडोस-पड़ोस। 4. मालिक।

3
खाद पड़े तो होबै खेती

खेती की सफलता खाद पर निर्भर है। जमीन खाद पाकर ही अच्छी फसल देती है। लगातार खेती करने से जमीन की उर्वरा शक्ति क्षीण हो जाती है, उसे सुरक्षित रखने के लिए खाद की उपयोगिता प्रमाणित हुई है। खाद ही भूमि को अधिक उपजाऊ बनाती है और जीवाश, लोहा, चूना, शोरा आदि की कमी को पूर्ण करती है। पाश्चात्य देशो मे खाद के विशेष प्रयोग से ही कृषि में आशातीत उन्नति हो रही है। हमारे देश मे कृषि-कर्म की प्रधानता है और यहाँ की अधिक जनता कृषि के द्वारा ही अपना जीवन-निर्वाह करती है।

लेकिन अग्रेजी शासन ने यहाँ की जनता को खुशहाल न देखने की प्रतिज्ञा ही कर ली थी। अतः अनेक रूपो मे यहाँ दरिद्रता को बढ़ाने मे ही इस कुशासन ने अपना गर्व समझा। हमारे कृषि-विशारदों ने अपने अनुभवों के द्वारा खाद की महिमा को समझा और उसके उपयोग पर विशेष जोर दिया। उन्होने स्पष्ट कहा कि—

जेकरे खेत पडा नहि गोबर, वहि किसान को जानो दूबर।

जो किसान अपने खेत मे गोबर की खाद नही डालता वह निर्धन बन जाता है। खेत को खाद से भरने वाला किसान ही धनधान्य से परिपूर्ण हो जाता है—

खेती करै खाद से भरै, सौ मन कोठिला में लै धरै।

हमारे देश मे खाद की कमी नहीं है लेकिन अज्ञानवश हमारे किसान भाई इधर-उधर पड़े हुए पदार्थों को तुच्छ मानकर उनका उपयोग नही करते।

खाद के लिए गोबर का उपयोग सर्वोत्तम एव सुलभ है। लेकिन कडे बनाकर इस गोबर को राख के रूप में परिवर्तित कर दिया जाता है। यह सत्य है कि गोबर डालने से खेत की उपज दुगुनी हो जाती है—

गोबर मैला नीम की खली, इनसे खेती दूनी फली।
गोबर मैला पानी सडै, तब खेती मे दाना पड़ै।
गोबर लेडी सन की खात, इनसे सदा खेत लहरात।

हार मे हड्डियों की कमी नही रहती। मरे हुए पशुग्रो की हड्डियाँ हमारे लिए विशेष लाभप्रद है। इनका चूरा खाद के रूप मे खेतो मे दिया जाता है। ये सूखी हड्डियाँ पृथ्वी मे मिलकर सोना उत्पन्न करती है। पूरा किसान वही है जो हड्डी का चूरा खेत मे डालता है—

वह किसान है पूरा, जो डारे हड्डी का चूरा।

अथवा

वही किसानी मे है पूरा, जो छोड़ै हड्डी का चूरा।

हमारे देश मे नीम की अधिकता है। यह वृक्ष वास्तव मे अधिक उपयोगी है। इसकी जड, पत्ते, सीके, छिलका, फल आदि अपना विशेष महत्त्व रखते हैं। आयुर्वेदाचार्यो ने कहा है कि 'सर्व रोगहरो निम्ब:' (नीम सर्व रोगो को हरने वाला है)। खाद के रूप में भी इसकी उपयोगिता अनूठी है।

जो तुम देव नीम की जेठी, सब खादों में रहे अनूठी।

सन सुलभ पदार्थ है। रस्सी बनाने के लिए इसे बो दिया जाता है। इसकी उपज भी अच्छी होती है। सन के डठलों को यों ही फेक दिया जाता है।

खाद के रूप में इन सूखे डंठलो की उपयोगिता मानी गई है—

सन के डंठल खेत छिटावे, तिनके लाभ चौगुनी पावे।
गोबर लेडी हो न जब, तब दो सन का खाद।
हरी तिली के खाद से, कृषकोन्नति अविवाद।
गोबर, लेडी, सन की खात, इनसे सदा खेत लहरात।

चूने को भी खेत में डाला जाता है, इससे कीड़े मर जाते हैं और खेत की खुश्की कम होकर नमी बढ जाती है। चूने को पौधे का आहार बताया गया है। लेकिन चूने के प्रयोग मे सावधानी रखनी चाहिए। यद्यपि चूने से खेती के उत्पात दूर हो जाते हैं।

चूना की खात, दूर करै उत्पात।

फिर भी असावधानी के कारण चूना फसल को नष्ट कर देता है।

(1) जिस भूमि में जीवांश कम हों और खाद कम दी जाती हो, उसमें चूना न

देना चाहिए। (2) चूना थोडा-थोडा करके कई बार डालना चाहिए, एक साथ बहुत न देना चाहिए। (3) खादो की भाँति चूना देकर खेत को जोतना नहीं चाहिए। (4) सात से बीस वर्ष तक इसका लाभदायक प्रभाव (भूमि मे) रहता है। (5) चूना दूसरी खाद मे मिलाकर खेत मे देना अच्छा होता है। (6) चूना दस मन प्रति एकड के अनुपात से सातवे वर्ष देना चाहिए। खाद का प्रभाव निश्चित है। विधि के विधान मे शका उत्पन्न हो सकती है, लेकिन खाद देने पर खेती की वृद्धि अवश्यभावी है। यह राम-वाण के समान तत्काल सफलता-द्योतक है।

महाकवि रहीम ने इस विषय मे कितनी दृढता से कहा है—

खादी कूढा नाठरे, कर्म लिखा टर जाय।
रहिमन कहै बुझाय के, खेत पांस पड़ जाय॥

गीले खाद की विशेष उपयोगिता बताई गई है—

गीलो खाद, धन बरसात।

खाद कब खेत में डालना चाहिए, इस विषय मे भी हमारे पुराने अनुभवी किसान भाइयों ने सकेत किया है—

आषाढ मे खाद खेत मे जावे।
तब मरि खेती दाना पावे॥

खाद डालने के पश्चात् खेत की जुताई परमावश्यक है। ऐसा करने से खाद खेत की मिट्टी मे पूर्ण रूप से मिल जाती है।

छोडो खाद जोति गहराई, तब ही खेती मजा दिखाई।

इस प्रकार खेती मे खाद की बडी आवश्यकता है, यों तो कृषि सम्पत्ति का प्रधान साधन है। लेकिन खादविहीन किसान के लिए खेती धन-विनाशिनी बन जाती है—

खेती धन को नास, खाद न होवे पास।

खेती का आनन्द खादभरे खेतों से ही मिलता है अन्यथा धन-धान्य उत्पादिका कृषि विपत्ति का कारण हो जाती है और वह नदी की रेत के समान सारहीन कहलाती है—

खाद पड़े तो हौबे खेती, नाही तौ रहे नदी कै रेती।

खाद परे तो खेत, नहीं तो कूड़ा रेत।
खेती बिना खाद, हुई है बरबाद।

हमारी सरकार ने कृषि की समुन्नति के लिए द्वितीय पचवर्षीय योजना में एक बड़ी भारी धन-राशि को व्यय करने का विचार किया है। अनेक कृषि केन्द्रों को स्थापित करके हमारे किसान भाइयो को सरकार कृषि-सम्बन्धी अनेका-अनेक सुविधाएँ दे रही है। कृषि-विकास पर ही हमारे देश का समुत्थान अवलम्बित्त है। कृषि-सुधार से हमारा सांस्कृतिक सुधार होगा। भारत सरकार भुखमरी और बेकारी को मिटाने के लिए दृढ सकल्प है इसीलिए वह खेती के विस्तार मे विशेष ध्यान दे रही है।

हमारे किसान भाइयों को चाहिए कि वे कृषि-केन्द्रों से पूर्ण लाभ उठाएँ और खाद के सतत उपयोग से खेती को सुख-समृद्धि का प्रतीक बनाएँ।

खेती से किसान, खेती से पिसान।
उत्तम खेती मध्यम बान, निखिद्ध चाकरी भीख निदान।
कर खेती का रोजगारा, बढि है धन-धान्य अपारा।
खेती कर लो, पानी कर लो, बैल जोत रजधानी।
काटपीट के घर मे घल्लो, ऐहू असल किसानी।

5

बिरवा की छैयाँ

वृक्ष हमारी सपत्ति है। ये वृक्ष ही हमारे देश को हर-भरा रखते है। प्रकृति की शोभा बढाने वाले ये पादप अपने सम्पूर्ण जीवन को परोपकार के ही लिए अर्पित कर देते हैं। फूल-फलों से ये हमारी ज़िन्दगी को सुखमय बनाते है। अपनी शीतल छाया में बैठाकर ये ही पेड़ मानव तथा पशु-पक्षियों की थकावट को दूर करते है। ऋषि-मुनियों ने इन वृक्षों के पास बैठकर ही आत्म-ज्ञान और आत्म-सिद्धि प्राप्त की थी और आज भी ये महर्षि इन पेडों का साथ नही छोड़ रहे हैं। भगवान् बुद्ध को बोधि वृक्ष के ही नीचे आत्म-बोध की प्राप्ति हुई थी। अपने पत्तों से ये पेड़ पशुओ की भूख मिटाते हैं। अनेक औषधियों का निर्माण उन वृक्षों की पत्तियों, फूलों-फलों तथा जड़ों से होता है। नीम के वृक्ष की उपयोगिता संसार में प्रसिद्ध है। कहा जाता है कि सम्पूर्ण रोगों का हरण करने वाला एक नीम का दरख्त है—(सर्व रोग हरो निम्बः)। पेड़ों की लकड़ी से ही मकान बनाए और सजाए जाते है। लकड़ी के खिलौने हमारे भारत की प्रसिद्ध मूर्तिकला के उदाहरण हैं। सागौन की लकड़ी से पलग, कुर्सी, पालकी आदि का निर्माण होता है। खैर, बाँस, चिरौंजी, बादाम, किशमिश, अखरोट, अमरूद, केला, चंदन, शरीफा, महुआ, गोंद, तेंदू आदि की प्राप्ति हमें पेड़ों से ही होती है। पेड़ हमारी राष्ट्रीय निधि हैं।

दूसरों के ही लिए फलने वाले ये वृक्ष[1] पृथ्वी माता के पुत्र हैं। अपनी जननी धारा के वृक्षस्थल से दूध पीकर ये बढ़ते हैं और अपने जीवन की अन्तिम साँस तक अपनी दयालु मैया की सेवा करते रहते हैं। सूर्य की तेज धूप से पृथ्वी को ये ही वृक्ष बचाते हैं। वर्षा की कठोर बूंदों को ये पेड़ पहले अपने सिर पर ही लेते हैं। आकाश से गिरते हुए कठोर ओलो से पादप अपने पत्तों का विनाश करवाते हैं, लेकिन अपनी धरती मैया पर किसी प्रकार का कष्ट नही आने देते। वैज्ञानिकों

1. परोपकाराय फलन्ति वृक्षाः

का कथन है कि अच्छी वर्षा के साधन ये पेड़ ही है। हरे-भरे स्थानो में अच्छी वर्षा होती है। वृक्षो की सघनता से जगल बनते है। पेड़ों के अभाव में जगल की सृष्टि असंभव है। जंगलों से अनेक लाभ है :

(1) जगल नदियो मे बाढ नही आने देते।

(2) ये झरनो और इनके द्वारा नदी-नालों, झीलो मे जल संरक्षण मे कुछ सहायता करते है।

(3) ये वन पहाड़ के नीचे के खेतों को बालू-पत्थर से भरने से बचाते है।

(4) पहाड़ी इलाकों मे मिट्टी को घुलकर बह जाने से ये कानन बचाते है। जमीन को कटकर खाई बनने से ये जंगल ही रोकते है।

(5) जगल के कारण वर्षा अधिक होती है। धार्मिक दृष्टि से भी पेड़ हमारे लिए पूज्य है। कुछ में तो देवी-देवताओ का निवास है और कुछ पावन होने के कारण देवता के समान पूजनीय है।

"...अश्वत्थ-वृक्ष के प्रति ऐसी ही मान्यता हमारे यहाँ प्रचलित है। हमारा ऐसा विश्वास है कि इस वृक्ष में सभी देवता निवास करते है। प्राचीन काल मे किसी को इसका स्पर्श करने की अनुमति नही थी। स्त्रियाँ प्रतिदिन हजार बार परिक्रमा कर इसकी पूजा करती थी। श्रावण के प्रत्येक शनिवार को अश्वत्थ वृक्ष की पूजा आवश्यक थी[1] इसी प्रकार वट वृक्ष की महिमा हमारे शास्त्रो मे देवता के रूप मे वर्णित ही है। महाप्रलय के पश्चात् वट वृक्ष पर बालमुकुन्द के दर्शन हुए थे। पीपल के मूल मे सृष्टिकर्त्ता विष्णु, तथा शाखाओं में संहार कर्त्ता एकादश रुद्रों का निवास बताया जाता है। नीम का वृक्ष भगवती दुर्गा का आश्रम स्थान माना जाता है।[2] आँवले के पेड़ में महालक्ष्मी का निवास है"—ऐसा कुछ विद्वानों का कथन है। फाल्गुन शुक्ला एकादशी को प्रत्येक हिन्दू स्त्री, इस पवित्र आँवले के वृक्ष की पूजा करती है। तुलसी और विल्व वृक्ष की धार्मिक मान्यता प्रायः सबको स्वीकार है।

वृक्षों की उपयोगिता बहुमुखी है और मानव-जाति के प्रति उनकी सेवाएँ आदर्श है। अतः इनका काटना महा पाप है और इनका लगाना एवं सिंचन करना विशेष पुण्य माना गया है।

---

1. लोक जीवन में वृक्ष-वनस्पति-श्री एम. एस. रधावा (हिन्दी नवनीत)
2. वृक्षों में देवत्व की प्रतिष्ठा—पं० रामप्रताप त्रिपाठी शास्त्री (योजना, फरवरी, 57)

महर्षि मनु का कथन है कि फलवान् वृक्ष, गुल्म लता आदि के काटने के पाप से मुक्त होने के लिए सौ बार गायत्री मत्र का जाप करना चाहिए—

"फलदान तु वृक्षाणां छेदने जप्य मृक् शतम्।
गुल्म वल्ली लताना च, पुष्पिताना च बीरूधम्।"

—मनुस्मृति, पृ० 568

पूर्व काल में राष्ट्र-धन होने के कारण पेड़ को काटने वाला अपराधी माना जाता था और उसे कठोर दंड भी देने का विधान था—

वनस्पतीना सर्वेषामुपभोगं यथा-यथा।
तथा तथा दमः कार्यो हिंसायामिति धारणा॥

—वृक्षो मे, जिसके फल-फूल और पत्तो का जैसा उपयोग हो, उसके नष्ट करने पर उसी के अनुसार दड देना उचित है। (मनुस्मृति, पृष्ठ 396) प्राचीन सस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश हिन्दी आदि भाषाओं के साहित्य में उद्यानों का बहुत ही सुन्दर वर्णन मिलता है।

कपिलवस्तु के बाहर पाँच सौ बगीचे थे। वाल्मीकि की अयोध्या उद्यानों से भरी हुई थी और कालिदास की उद्यान-परम्परावाली उज्जयिनी का तो कहना ही क्या![1]

मनुस्मृति, वृहत्पाराशरी एवं शुक्रनीति के अध्ययन से प्रकट होता है कि हमारे प्राचीन भारत मे वृक्षों की रक्षा पर विशेष ध्यान दिया जाता था और सर्वत्र बागों की बहार थी। हमारा वैदिक साहित्य वृक्षो की प्रशस्तियो से भरा हुआ है। ऋग्वेद मे अश्वत्थ, शमी, पलाश शाल्मली, खदिर, शिशपा आदि का उल्लेख ही ऐतरय ब्राह्मण (3 35 4) मे वटवृक्ष का विवरण है।[2]

वृक्षों का लगाना राष्ट्रीय सेवा का पुनीत मन्त्र है। राष्ट्र की वैभव वृद्धि में पेड़ो की रक्षा का अत्यधिक मूल्य है। वृक्षों के लगाने की महिमा का वर्णन निम्नस्थ श्लोकों में विशेष रूप से किया गया है:

अश्वत्थमेकं पिचुमन्दमेक न्यग्रोधमेक दश चिंचिणीभिः।
षट् चम्पकास्ताल शतत्रय च नवाम्र वृक्षैर्नरकं न पश्येत्॥1॥

---

1. प्राचीन भारत के कलात्मक विनोद, पृ० 44
2. वैदिक साहित्य, पृ० 310

यावन्ति खादन्ति फलानि वृक्षात्क्षुद्वह्नि दग्धास्तनु भृन्नराद्याः ।
वर्षाणि तावन्ति वसन्ति नाके वृक्षैक वापास्त्व मरौघ सेव्याः ॥2॥
यावन्ति पुष्पाणि महीरुहाणा दिवौकसा मूर्धनि भुतसेवा ।
पतन्ति तावन्ति च वत्सराणां शतानि नाके रमतेऽवापी ॥3॥

—बृहत्पाराशरी, पृष्ठ 364

—एक पीपल, एक नीम, एक वट, दस इमली, छ. चम्पक, तीन सौ ताल वृक्ष, नौ आम वृक्ष लगाने वाला पुरुष नरकगामी नही होता ॥1॥

—क्षुधारूपी अग्नि से दग्ध मनुष्य, पक्षी आदि प्राणी वृक्षों से लेकर जितने फल खाते है, उतने वर्ष वृक्ष लगाने वाला पुरुष देवतागणों से सेव्यमान स्वर्ग में वास करता है ॥2॥

—पुण्यात्मा मनुष्य के लगाये हुए बगीचे के जितने फूल देवताओं के मस्तक पर चढाए जाते है या पृथ्वी पर गिरते है, उतने शत वर्ष तक वह वृक्ष लगाने वाला स्वर्ग मे रमण करता है ॥3॥

हमारे लोकगीत वृक्षो की घनी छाया से शीतल हैं, पुष्पो के पराग से सुगंधित है और मधुर फलो के आस्वाद से मीठे है। भगवान् राम, सीता एव लक्ष्मण की उद्यान-प्रियता हमारे लिए एक महान् आदर्श उपस्थित करती है—

राम क बगिया सिता कै फुलवारी।
लछिमन देवरा वइठ रखवारी।
फरि गए नेवुआ लटकि गई डारी।
तोरि-तोरि नेबुआ पठावै ससुरारी।
बोहि नेबुआ क बनै तरकारी।

लोककाव्य में वर्णित मकान का आँगन, दरवाजा, पिछवाड़ा तथा मार्ग, सर-सरिता एवं पनघट आदि विविध वृक्षो की छाया से शीतल होते रहते हैं—

—मोरे के अँगना तुलसिया रे पतवर झलारि रे !

× × ×

राम के दुआरा चन्दन के पेड़वा मोतियन कर है ओ।
मोर पछुरवारे के लवंगा डरिया, लौगचुब्बै आधी रात।
मोरे पिछवारे एक बगिया लगत है, निबुल नरंगी अनार रे !
गंगा के ओरे जमुना के छोरे एक महुआ एक आम रे

अमवा महुलिया घन पेड जेही रे बीचे राह पड़ी
राम तेहि तर ठाडी एक तिरिया मने माँ बैराग भरी ।

हमारा प्राचीन भारत वैभवशाली किसानो की बस्ती था । एक लाख आम के पेड़ो से हरा-भरा जिस कृषक का बगीचा हो उसकी समृद्धि का क्या कहना !

काहे बिनु सून अगनवाँ ये बाबा काहे बिनु सून लखराउँ ।

हमारी चेतना को सप्राण बनाने वाले ये पेड़ लोकजीवन के साथी है । इनकी रक्षा करना मानो देश को गरीबी से बचाना है । श्री जवाहरलाल नेहरू के शब्दो मे ऊगता हुआ पेड प्रगतिशील राष्ट्र का प्रतीक है ।

श्री के० एम० मुशी पेड़ों को ही अन्न का उत्पादक मानते है । उनका कहना है कि पेड़ो से वर्षा, वर्षा से अन्न और अन्न से ही जीवन है ।

देश की श्री बढाने के लिए आज प्रत्येक भारतीय को पेड़ लगाने की प्रतिज्ञा करनी चाहिए और एक मित्र की तरह उसकी सुधि लेते रहना चाहिए ।

5

बुंदियाँ बरसन लागीं

श्रावण मास लग चुका है। आकाश में काले-काले बादल दिखाई पड़ रहे हैं। गर्मी से संतप्त मानव ललचाई हुई आँखों से नभ की ओर देखता है एक-एक बूँद के लिए तरसते हुए मन इन्द्रदेव की वन्दना मे लग जाते है। शीतल पवन के झोंके से प्रस्वेद-बिन्दुओ से भरा हुआ शरीर शान्ति का अनुभव करने लगता है। कुछ क्षणो के बाद विस्तृत गगन जल की फुहारे छोडने लगता है और मदमाते जलधर आँख-मिचौनी खेलकर ससार की आँखों को मदोन्नत कर देते है। इसी सावन मे विरही मेघ ने अपनी पत्नी की स्मृति को कई बार हरा-भरा किया था और महा-कवि कालिदास ने 'मेघदूत' महाकाव्य की सृष्टि करके इसी पावस की रस-सिक्तता को साकार बनाया था।

श्रावण के ये रसीले पयोधर वडे सलौने होते हैं। इनकी श्यामता को देखकर कजरारी अखियाँ झुक जाती है। विरहिणी पल-पल मे विरह कातरा बनकर अपने विदेश गये हुए प्रियतम के चिन्तन मे आत्मज्ञान खो बैठती है।

भगवान् कृष्ण की प्रतीक्षा में रहनेवाली गोपिकाएँ बड़ी स्वाभिमानिनी थीं। लेकिन उनका यह मान काले कजराजो के समान इन मेघो की गर्जन से विकलित हो गया था। गोपियो ने अपनी विकलता को स्पष्ट करते हुए इसी सावन में कहलवाया था—

देखियत चहुँ दिसि ते घनघोरे।
मानों मत्त मदन के हाथिन, वलकर बंधन तोरे।
कारे तन अति चुवत गड मद बरसत थोरे-थोरे।
रुकत न पवन महावत हू पै मुरत न अकुस मोरे।

पावस के प्रथम पयोद को बिहारी की नायिका ने तो विकराल धुआँ ही माना था—

धुरवा होहिं न अलि इहै धुआँ धरनि चहुँ कोय।
जारत आवत जगत को पावस प्रथम पयोद।

—बिहारी सतसई, 572

श्रावण की ये घटाएँ अघटित घटनाओ को भी घटित कर दिखाती है। विरही राम ने अधीर होकर इसी मास की अँधियारी निशा में कहा था—

घन घमंड नभ गरजत घोरा।
प्रिया हीन डरपत मन मोरा।।

—रामचरित मानस

राग भाव को उदीप्त करनेवाले ये सजल घन शुष्क को भी आर्द्र कर देते है। इनकी छाया को देखते ही व्रती भी अपना व्रत भूल जाते है, सयमी उपासक भी मदिरा का एक घूंट पीने के लिए आतुर हो जाता है—

आज पीता हूँ घटा आई है घिरकर जाहिद[1]।
कल किसी वक्त खुलेगा तो मुसलमाँ[2] होगे।

रस बरसाने वाले आषाढ के महीने मे आकाश से ठुमुक-ठुमुककर उतरनेवाली इन कमसिन बूंदों को देखकर यदि युवतियाँ अपनी मनुहारों को प्रियतम की बाँहों में बाँधना चाहें तो स्वाभाविक ही है। इस पावस के प्रारम्भ मे गाये गए लोक-गीत विरह के प्राणवान आँसू है। इनमे विरहिणी का प्रलाप है और संभाव्य वियोग के प्रति आक्रोष है—

घेरि-घेरि आवैं पिया कारी बदरिया,
दैवा बरसैं हो बड़े-बड़े बूंद।
बदरिया बैरिन हो···

सब लोग भीजें घर अपने
मोरा पिया हो भीजैं परदेस।
बदरिया बैरिन हो···

उधर बादल बरसते है और इधर गोरी की आँखो से आँसुओं की झड़ी लग जाती है, क्योंकि उसका प्यारा कोसों दूर है।

करूँ कौन जतन अरी, ए री सखी!
मोरे नयनों से बरसे बदरिया।

---

1. संयमी। 2. मुसलमान।

उठी काली घटा, बादल गरजै,
चली ठंडी पवन, मोरा जिया लरजै,
थी पिया मिलन की आस, सखी!
परदेस गए साँवरिया।

एक युवती पलग पर सो रही थी। वह एकाकी थी। सावन की काली रात में सहसा मेघ-गर्जन हुआ। वह उठ बैठी और गुनगुनाने लगी—

रात दरक गई छतियाँ,
गरज सुन।
चातक मोर पपीहरा बोलै;
हूँक उठत सुन बतियाँ—
गरज सुन रात दरक गई छतियाँ।

धरा जब रसवती बन जाती है तब उसका चिकना रूप बड़ा ही सुन्दर लगता है। सँभल-संभलकर चलने वाले भी फिसलने लगते हैं। इस रसमयता के वातावरण में वियोग की आशका भी हृदय को कम्पित कर देती है। एक युवती विदेश जाने वाले पति को रोक रही है और घर पर ही रहने का आग्रह करके उसे अपनी कथा सुनाती है—

बरसन लागी बुदियाँ—
बालम, बरसन लागी बुँदियाँ! रामा!
कारे-कारे छाए बदरवा,
नाचत मोर-मोर मन हरवा,
खेलत आँख मिचौनी धुरवा।
बस रम्रो सैयाँ
बरसन लागीं बुँदियाँ! रामा!
अबकी घर मे रहइयो, सैयाँ।
और चरइयो घर की गैयाँ।
चहुँदिस भर गए ताल-तलैयाँ।
बस रम्रो सैयाँ,
बरसन लागी बुदियाँ—
बालम, बरसन लागी बुदियाँ! रामा!

रंगीन चूनरी पहने हुए एक नवोढ़ा अपने प्यारे से मिलने के लिए विह्वल है।

सहसा झमाझम वर्षा होने लगी। उसे भय है कि बूंदे उसकी साडी को भिगो देगी लेकिन प्रेम की प्राप्ति मे वह चूनरी की परवाह नहीं करती है और रसभरी आषाढ की बूंदो से वह अपने आपको जीवनमय कर लेती है।

बूंदन भीजै मोरी सारी,
मै कैसे आऊँ, बालमा!
एक तौ मेह झमाझम बरसै,
दूजे पवन झकोर।
आऊँ तो भीजै मोरी सुरग चुनरिया,
नाही त छुटत सनेह।
नाही डर बहुअरि भीजै क चुनरिया।
डर बहुअरि छुटैक सनेह।
सनेह से चुनरी होइ है बहुअरि।
चुनरी से नाहिन सनेह।[1]

श्रावण की बूंदो से शरीर मे एक सिहरन उत्पन्न होती है, जो मन में दबी हुई भावनाओ को जगा देती है। बघेलखण्ड की एक कामिनी आषाढ की बुँदियो से पुलकित होकर बारहमासी गाने लगती है और अपने अतृप्त प्यार की ओर सकेत करके प्रगाढ मधुर प्रेम की याचना करती है—

राजा! बरसन लागी असढ बुँदियाँ,
राजा! कबहुँ न सोये, छबाय बगला।
राजा! बरसन लागी असढ़ बुँदियाँ।
चारि महिनमा के आए जड़िकाला,
राजा कबहूँ न सोए लगाई छतियाँ।
चारि महिनमा के आये धुपकाला,
राजा! कबहूँ न सोये डुलाइ बेनिया।
राजा! बरसन लागी असढ़ बुदियाँ।[2]

पावस की बहार प्रियतम के समीप मे ही सुहावनी लगती है। आकाश जब पृथ्वी से एकाकार हो जाता है तब चराचर मिलन की भावना से विभोर हो उठते

---

1 व 2 'लोक-रागिनी'—सत्यव्रत अवस्थी

हैं। वियोग मे ये जीवनदायक पावस बादल जीवनघातक सिद्ध होते है।

प्रोषित पतिका नायिका के वाक्य कितने मर्मस्पर्शी है—

कौन सुनै, कासो कहौ, सुरति विसारी नाह।
बदाबदी जियलेत है ये बदरा बदराह।

—बिहारी सतसई, 511

बादल घुमड-घुमड़कर अठखेलियाँ कर रहे है। श्यामल मेघो को देखते ही एक युवती का हृदय रो उठता है। पनघट पर खड़ी हुई वह अपनी विवशता पर झुंझला रही है। पानी के अभाव मे जैसे मछली तड़पती है, उसी प्रकार वह पनघट की गौरी पावस में पति-वियोग से विकल है।

यहाँ उसकी मानसिक वेदना सजीव हो गई है—

झुकी आया बादल काला, पियाजी परदेस गया।
सूरज का बैरी हो बादला, जल का बैरी जम्माव[1]।
हमारा बैरी हमारा सायबा,[2] नही रे सदेशो पठाव।
हऊँ तो पनघट पर रोवती जोऊँ म्हारा पियाजी की बाट।
देश परायो भूमि आपणी, नही मिल जाण-पहिचाण
सासूजी घर छे आकरी[3] नणदजी[4] दीसे[5] गाल
देवरजी चुगली कर से म्हारो काई हुऐ हाल।
जल बिन जसी तलफ माछलई[6]
तलफ तलफ मरी जाय।
असो तलफ म्हारो जीवड़ो,[7]
नहीं रे सन्देसो पठाव।
झुकी आया बादल काला, पियाजी परदेश गया।

—निमाड़ी लोकगीत; श्री रामनारायण उपाध्याय, पृष्ठ 60

श्रावण मास के लगते ही सब युवतियाँ तितली बन जाती हैं। उनके गोरे शरीर रंग-बिरंगे कपड़ो से सुसज्जित होकर खिल उठते है। एक सुन्दरी पति के आने पर ही अपनी चुनरी रंगाना चाहती है। क्यों ?

उत्तर स्पष्ट है—

---

1. काई, 2. प्रियतम, 3. कठोर, 4. ननद, 5. फुलाना, 6. मछली, 7. प्राण।

सखी, लगा महीना साढ
प्यारी, लगा महीना साढ।
चुदड़ी रगाव सब नारी।
हम तो चुनडी जमी जो रगावे जो घर आवे मेरे स्वामी।
मेरे स्वामी दिन नही चैन-रात नही निदिया, तारे गिनते रैन गई॥

पावस-आगमन को शत्रु के समान मानती हुई एक विरहिणी अटा पर भी नही चढना चाहती और न हरियाली को देखना पसद करती है। पिय-यश सुनकर ही वह जीवन-यापन करने के लिए इच्छुक है—

हम पै बैरिन बरसा आई, हमे बचा लेव माई।
चढैक अटा-घटा ना देखे, पटा दवे अगनाई।
बारादरी दौरियन मे हो, पवन न जावे पाई।
जे द्रुम कटा-छटा फुलवगियाँ, हटादेव हरयाई।
पिय जस गाय-सुनाव न ईसुर, जो जिय चाव भलाई।

इस प्रकार श्रावण की नन्ही-नन्ही बुदियाँ किसी को अमृत हैं तो किसी को विष, पर है ये बड़ी ही सलौनी।

6

राम की चिरइयाँ, रामजी कौ खेत···

किसान ही ससार मे सच्चा अन्नदाता है। इसके परिश्रम पर ही यह दुनिया टिकी हुई है। पशु-पक्षी, देव-दानव, कीड़े-मकोड़े और नर-नारायण-सब किसान के बल पर ही जीवित हैं। यदि किसान खेती करना छोड़ दे तो विश्व मे हाहाकार मच जाय और प्रलय का भयकर दृश्य उपस्थित हो जाय। किसान की तपस्या महान् है। इसका त्याग आदर्श है और जीवन परोपकारमय है। इसकी दुनिया निराली है। इसने अपना पेट बाँधकर ससार को जिलाया है और लँगोटी लगाकर नंगी दुनिया को कपडा पहनाया है। ऊँचे महलो को देखकर यह कभी नही तरसा। दूसरो के घरो मे जलते दीपकों को देखकर इसने भगवान् से यही प्रार्थना की कि सबके घरों में दीये जले और सब सुखी हो। पके हुए खेतों को देखकर किसान फूल उठता है और पक्षी आ-आकर मँडराने लगते है। वह ऊँचे स्वर से चिल्लाता है—

राम की चिरइयाँ, रामजी कौ खेत।
खाव री चिरइयाँ, भर-भर भेट ॥

कितना विशाल और उदार है इस किसान का दिल ! वह अपना कुछ नही मानता। धरती भगवान् की है। धन ईश्वर का है। फसल पृथ्वी की है। यह विरक्ति ही किसान को परोपकार में लगाये हुए है। वह गुनगुनाता रहता है—

यह धरती परमेश्वर की है।
ये फसले उस ईश्वर की है।
यह माया शिवशकर की है।
यह काया धरनीधर की है।

पृथ्वी का पुत्र किसान है। वह जगल मे अकेला रहकर अनाज उत्पन्न करता है और सबके घरो मे चक्की चलवाता है। अन्न को परमात्मा कहा है —'अन्नं

ब्रह्म ।' इस परम पूज्य ब्रह्म का उत्पादक किसान है, इसीलिए यह कृषक महाब्रह्म के रूप मे सदा पूज्य है। मिट्टी मे अपने-आपको मिला देने वाला, रात-दिन के भेद को भूलकर परिश्रम करने वाला, रूखा-सूखा भोजन करने वाला और आपत्तियों से कभी न डरने वाला यह किसान न मालूम कब से हल चला रहा है और कब तक चलाता रहेगा। वह दुनिया का पहरेदार है। इसकी साँसो से ही यह ससार साँस ले रहा है। भगवान् के मन्दिर में भोग किसान के अन्न से ही लगता है। साधु-महात्मा का तप किसान के अन्न से ही जी रहा है। राज्यों की सत्ता किसान के हल पर टिकी है। यदि आज किसान अपने हल को फेंक दे तो कल राज्यो की सत्ता नष्ट हो जाय। किसान की शक्ति महान् है, और उसकी मौजूदगी विश्व की स्थिति के लिए परमावश्यक है।

शहर बने हैं इसके बल पर,
महल खडे है इसके श्रम पर।
भोग-विलास कर रहा मानव,
इस नगे किसान के दम पर।

× × ×

साधु पल रहे इसके धन से।
राज्य चल रहे इसके धन से।
वृक्ष फल रहे इसके श्रम से।
दुक्ख टल रहे इसके श्रम से।

यह बात तो सत्य है कि विश्व का पालन-पोषण करने वाला यह धरती का लाल बहुत समय से दुखो में पल रहा है। इसकी दशा दयनीय रही है। कविवर श्री सनेही जी की इन पंक्तियों मे कृषक का चीत्कार है—

नही मिलती है पेटभर हमको रोटी।
न जुडता है कपड़ा सिवा एक लँगोटी।
बनी झोंपड़ी माँद से भी है छोटी।
कहै और क्या आज किस्मत है खोटी।
नही ऐसा दु.ख जो उठाया न हमने।
कहीं किन्तु दुखड़ा सुनाया न हमने।

अपनी हरी-भरी खेती को देखकर यह हमारा अन्नदाता अपने सब कष्टों को

भूल जाता है।

हरी-भरी खेती ही इसके
जीवन का है एक सहारा
यह किसान है जो भूतल पर
कभी नही कष्टो से हारा।

यह हमे स्वीकार करना पड़ेगा कि पृथ्वी से जितनी अधिक ममता इस किसान को है, उतनी किसी को नही। खेती करता हुआ कृषक बर्बाद हो जाता है, उसकी झोंपड़ी तक नीलाम हो जाती है। उसकी आँखों के ही सामने उसके साथी बैल बिक जाते है, फिर भी वह धरती की धूल को पूजता है तथा अपने मस्तक पर लगाता है, और नई उमगो के साथ फिर उसकी सेवा मे लग जाता है। इसीलिए तो कहा जाता है कि धरती का सच्चा पुत्र किसान ही है और यह पृथ्वी उसकी ही है। आज युग की पुकार किसान के लिए है। श्री केदारनाथ अग्रवाल की ओजस्विनी वाणी ललकार कर कह रही है—

यह धरती है उस किसान की,
जो बैलों के कधो पर
बरसात - घाम मे
जुआ भाग्य का रख देता है।
खून चाटती हुई वायु में,
पैनी कुसी खेत के भीतर
दूर कलेजे तक ले जाकर
जोत डालता है मिट्टी को
पाँस डालकर।
और बीज फिर वो देता है।
नए वर्ष में नई फसल के!
ढेर अन्न का लग जाता है।
यह धरती है उस किसान की।
नही राम की!
नही कृष्ण की!

नही भाम, सहदेव, नकुल की !
नही पथिक की !
नही राव की, नही रक की।
नही तेग, तलवार - धर्म की !
नहीं किसी की, नही किसी की !
धरती है केवल किसान की !...

महान् परोपकारी होने से किसान पुण्यात्मा है। उसकी देह पवित्र है। उसकी आत्मा सदा शुद्ध रहती है। वह त्यागमूर्ति है, इसलिए मृत्यु के पश्चात् वह ब्रह्म लोक को प्राप्त होता है। श्री मन्पराशर आचार्य का कथन है कि एक मूठी अन्न देने वाला भी किसान सम्पूर्ण पापो से मुक्त हो जाता है। जिस किसान के खेत से जितने दाने प्राणी खाया करते है। उतने ही पातक किसानों के छूट जाते है।

पुष्ट्यर्थं मुष्टिमेक वा ददत्पापं व्यपोहति।
यस्य क्षेत्रस्य यावति सस्यान्यदन्ति प्राणिनः।
तावता विप्रमुच्यते पातकात्कृषि कारकाः।

—वृहत्पाराशरी' पृ० 124

आज हमारी उदार नेहरू सरकार किसानो के उत्थान के लिए सब कुछ कर रही है। अब किसान दुखी नही रह सकता। हमारी सरकार कृषक को अपना बल समझ रही है। उसके उत्थान में ही जन-जन का कल्याण है और देश का गौरव है।

धरती को शस्य-श्यामला बनाने वाला किसान ही हमारा भाग्यविधाता है।

7

कहैं भड्डरी पानी बरसै

खेती की सफलता वर्षा पर निर्भर है। यदि समय पर पर्याप्त वर्षा न हो तो कभी भी अच्छी खेती नही हो सकती। भारतवर्ष कृषि-प्रधान देश है अतः पावस हमारे लिए विशेष उपयोगी है। यदि शान्त भाव से विचार किया जाय तो हमें मानना पड़ेगा कि वर्षा पर ही अन्य सब ऋतुओ का सौन्दर्य आधारित है।

हमारे किसान भाइयों ने आकाश की स्थिति पर वर्षा के सम्बन्ध मे बहुत कुछ विचार किया है। ये चमकते तारे केवल प्रकाश ही नही देते है बल्कि हमारे भविष्य का भी सकेत करते है। तीव्र-मन्द गति से चलता हुआ यह पवन वर्षा होने अथवा न होने की सभावना सूचित करता है। चन्द्रमा और सूर्य का उदय-अस्त एवं उनका मेघो से घिरना बहुत कुछ बताता है। हमारे ग्राम-निवासियों ने चन्द्र-ग्रहण तथा सूर्य-ग्रहण को आधार मानकर आगामी वर्ष के विषय मे जो भविष्य-वाणियाँ की है वे आज भी सत्य हो रही है।

भड्डरी प्रसिद्ध ज्योतिषी थे। इनके जन्म, जाति और निवास-स्थान के सम्बन्ध में अनेक किंवदन्तियाँ प्रचलित है। बताया जाता है कि भड्डरी के पिता ब्राह्मण थे और माता अहीरिन थी। यह भी प्रसिद्ध है कि ये (भड्डरी) राजपुताने के निवासी थे। भड्डरी नाम की एक स्त्री भी बताई जाती है, जिसके पति का नाम डक कहा जाता है।[1] हमे यहाँ भड्डरी की वर्षा सम्बन्धी उक्तियो पर ही विचार करना है। यह तो सत्य है कि वे विद्वान् थे और जो कुछ उन्होने कहा है उसका वैज्ञानिक महत्त्व आज भी नही भुलाया जा सकता। वर्षा के विषय में विचार करते समय बादलों की स्थिति को हमेशा ध्यान मे रखना चाहिए। इनकी दौड़, इनका रग, इनका गरजना-बरसना, नक्षत्रों से इनका सम्बन्ध आदि को देखकर हमे अति वर्षा, कम वर्षा, खड वर्षा का अनुमान हो सकता है।

1. ग्राम-साहित्य (तीसरा भाग)—प० रामनरेश त्रिपाठी, पृ० 12

बादर ऊपर बादर धावै।
कह भड्डर जल आतुर आवै।

—यदि बादल के ऊपर बादल दौड़ता है तो वर्षा शीघ्र होगी, ऐसा भड्डरी का कथन है।

सुदि असाढ की पचमी, गरज धमधमो होय।
तो यो जानो भड्डरी, मधुरी मेघा जोय।

—आषाढ सुदी पचमी को मेघो का गरजना भड्डरी के कथनानुसार अच्छी वर्षा का सूचक है।

असाढ़ मास पूनो दिवस, बादल घेरे चन्द।
तो भड्डर जोसी कहै, होवै परम अनन्द।

—आषाढ़ की पूर्णिमा को यदि चन्द्रमा बादलो से घिरा हुआ दिखाई दे तो समझिए कि वर्षा अच्छी होगी और सब जगह आनन्द-मंगल होगा।

तीतर बरनी बादरी रहै गगन पर छाय।
कहै भड्डरी मान लो, बिन बरसै ना जाय।

—यदि आकाश में तीतर रग के बादल हो तो वर्षा अवश्य होगी। इसे ध्रुव सत्य मानो।

कातिक सुदी एकादसी, बादल बिजुली होय।
तो असाढ़ मे भड्डरी बरखा चोखी होय।

—कार्तिक सुदी एकादशी को यदि आकाश में मेघ हों, और बिजली चमकती हुई दिखाई दे तो समझिए कि आषाढ़ में अच्छी वर्षा होगी।

पौष मास दशमी दिवस बादल चमकै बीज।
तौ बरसै भर भादवाँ, साधो खेलौ तीज।

—पौष मास की दशमी को यदि बादलों मे बिजली चमके तो यह निश्चित है कि पूरे भादों में वर्षा होगी और लोग आनन्द मनायेगे।

जेठ मास जो तपै निरासा।
भड्डरि फिर बरखा की आसा।

—जेठ में कड़ी धूप का होना बताता है कि वर्षा अच्छी होगी।

वर्षाकाल में मेढको को अधिक आनन्द होता है। वे पावस के मीत कहे जाते हैं। अतः उनकी इच्छा यही रहती है कि आकाश बादलों से हमेशा काला बना

रहे। मेंढकों की बोली से भी भड्डरी ने वर्षा का अनुमान लगाया है। वह कहते हैं—

उतरे जेठ जो बोलैं दादर,
कहैं भड्डरी बरसै बादर।

—जेठ के उतरते ही यदि मेंढक बोले तो वर्षा की पूर्ण संभावना है।

जो बदरी बादर माँ खमसै ।
कहै भड्डुरी पानी बरसै ।

—यदि बादल मे बादल छिपने लगे, तो वर्षा अच्छी होगी । यह भड्डुरी का कहना है ।

सावन सुकला सप्तमी, छिपि कै उगै जो भान ।
तब लगि भड्डुरि बरसिहै, जब लगि देव उठान ।

—श्रावण शुक्ला सप्तमी को यदि बादलो के कारण उगता हुआ सूर्य दिखाई न दे तो समझिए कि देवोत्थान तक वर्षा होती ही रहेगी ।

तीतर पंखी बादरी, विधवा काजर रेख ।
वे बरसै ऊ घर करै, कहै भड्डुरी देख ।

—तीतुर के पख के रग वाले बादल अवश्य बरसते है, और आँखों में काजल लगाने वाली विधवा दूसरा पति करके ही मानती है ।

सुक्कर वारी बादरी रहे सनीचर छाय ।
तो यो भाखै भड्डुरी, बिन बरसै नहि जाय ।

—शुक्रवार को दिखाई देने वाले बादल यदि आकाश में शनिवार तक रुकते हैं तो वे वर्षा करके ही जायेंगे ।

कलसे पानी गरम है, चिरियाँ न्हावै धूर ।
अडा लै चीटी चढै, भड्डुरि बरखा पूर ।

—घडे के जल का गरम रहना, चिड़ियो का धूल में नहाना और चीटियों का अपने अडो को लेकर ऊपर चढना सिद्ध करता है कि वर्षा अच्छी होगी ।

भड्डुरी के ये कुछ वर्षा-विषयक अनुमान किसानों के लिए अधिक लाभप्रद है।

8

घाघ कहैं बरखा सौ कोस...

घाघ अपने समय के एक प्रसिद्ध अनुभवी विद्वान् थे। इन्होने देश-विदेशो का भ्रमण करके और सत्सग से बहुत कुछ सीखा था। इनकी लोकोक्तियो के अध्ययन से कहा जा सकता है कि ये कृषि-शास्त्र तथा राजनीति के महान् ज्ञाता थे। जो कुछ इन्होने कहा है उसका समर्थन अनेक शास्त्रो एव राजनीति के ग्रन्थो से आज भी किया जा सकता है। गाँवों मे इस विद्वान् की कहावतो को पूर्ण रूप से सत्य माना जाता है और महाकवि तुलसीदास की चौपाइयो के समान ही इसकी उक्तियो को अनेक अवसरो पर दुहराया जाता है। सुना जाता है कि गुणज्ञ सम्राट् अकबर ने इस लोक-नीति विशारद घाघ को अपने दरबार मे उचित आदर दिया था। जन-जीवन से सम्बन्धित अनेक विषयों पर घाघ ने अपने विचारों को पूर्ण सत्यता के साथ प्रकट किया है। इनके कथन इतने अनुभूत है कि किसी को भी किसी प्रकार की शका नही हो सकती है। विभिन्न जनपदो की बोलियो ने घाघ की कहावतो को अपनाया है और उन्हे अपने ही रूप मे परिवर्तित कर लिया है। इसीलिए कन्नौज-निवासी घाघ अब पूरे भारतवर्ष के माने जाने लगे है। ये लोकाचार के पडित और लोक-शास्त्र के उद्भट विद्वान् थे। कुछ विचारकों ने इन्हे लोकाचार्य कहकर सम्मानित किया है।

यहाँ मैं केवल उन कतिपय उक्तियो को उद्धृत कर रहा हूँ, जो अवर्षा से सम्बन्धित है। इनमे उन कारणो का उल्लेख हुआ है जिनसे यह अनुभव किया जा सकता है कि वर्षा न होगी और किसान को अन्य साधनों का सहारा लेकर अपने खेतो की सिचाई करनी चाहिए। घाघ ने इन कहावतों में जो कुछ कहा है वह ज्योतिष-शास्त्र सम्मत होता हुआ भी अनुभूत है। वह स्वय किसान थे और किसानों के बीच रहे। अपने विश्वासो को उन्होने अनुभवो द्वारा परखा और सही पाया।

प्रकृति और मानव का सम्बन्ध चिरकाल से चला आ रहा है। पेड़, पर्वत, नदियाँ, पशु-पक्षी और वन-उपवन हमारे जीवन के साथी है। इनसे हम बहुत कुछ सीखते है और सच्चे मित्र के समान ये हमे आनेवाली विपत्तियों से बचाते है तथा सतर्क करते रहते हैं। कास का फूलना बताता है कि वर्षाकाल समाप्त हो रहा है और अब जल की प्राप्ति के लिए आकाश की ओर देखना निरर्थक है।

लगे अगस्त फुले बन कासा।
'घाघ' छोड़ बरखा की आसा।

—अगस्त नक्षत्र के उदय होने पर और कास के फूलने पर वर्षा की आशा छोड़ देनी चाहिए।

लाल पियर जब होय अकास।
तब न घाघ बरखा कै आस।

—वर्षाकाल में लाल-पीले बादलो को देखकर यह समझ लेना चाहिए कि वर्षा समाप्त है।

ढेकी बोलै जाय अकास।
घाघ नाही बरखा कै आस।

ढेकी (पक्षी विशेष) का आकाश में बोलना प्रकट करता है कि वर्षा खतम है।

रात निचदर दिन में छया।
घाघ कहैं अब बरखा गया।

—रात में आकाश का बादलों-रहित होना और दिन में मेघो से छा जाना बताता है कि वर्षा अब न होगी।

दिन मे गरमी, रात में ओस।
कहै घाघ वर्षा सौ कोस।

—दिन में गरमी पड़ना और रात मे ओस का गिरना यह सिद्ध करता है कि वर्षा अब दूर है। जल वृष्टि की आशा करना निरर्थक है।

दिन मे बादलों का होना और रात में इनका विलीन हो जाना तथा पूर्वी हवा का धीरे-धीरे चलना यह संकेत करता है कि वर्षा न होगी और सब खेती सूख जाएगी—
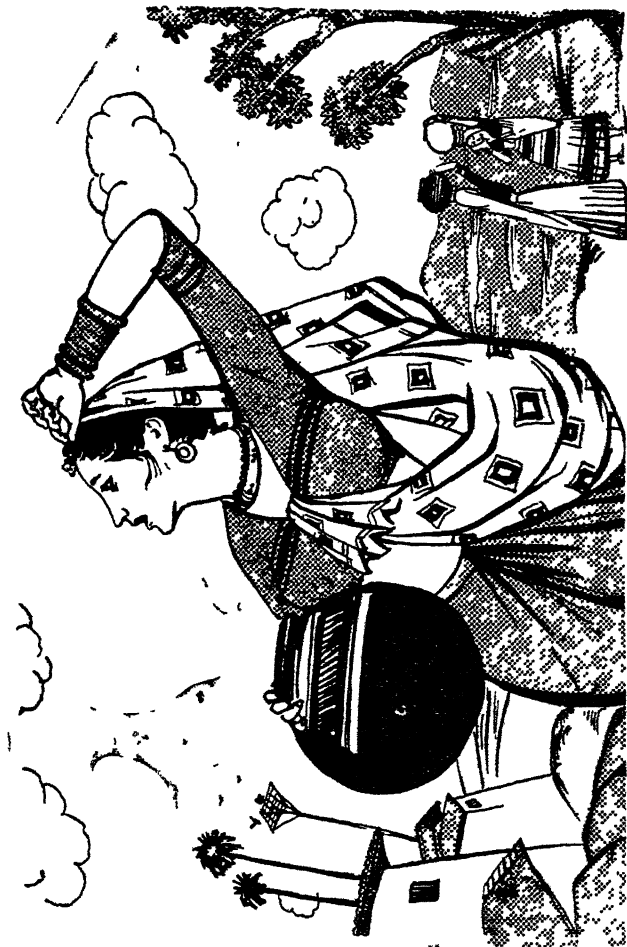
दिन को बादर, रात निचन्दर,
बहै पूरबी मद्दर - मद्दर ।
कहै घाघ अब बरखा नाही ।
सिगरी जिन्से जाइँ सुखाही ।

× × ×

आगे मगल पीछे भाव ।
घग्घा बरखा ओस समान ।

—जब मगल के पीछे सूर्य चले तब वर्षा का योग अच्छा न समझिए। ऐसी स्थिति मे ओस के समान बहुत कम जल-वृष्टि होगी।

माघ उँजेरी पचमी, चलै जो चोखी बाय ।
घाघ कहैं तो भादवौ, बिनु बरसै ही जाय ।

—माघ सुदी पचमी को यदि अच्छी हवा चले तो भादो के महीने में वर्षा न होगी।

सावन सुकला सप्तमी, उवत जो दीखै भान ।
तो जल मिलि है कूप मे, या गगा असनान ।

—सावन सुदी सप्तमी को यदि आकाश मे मेघ दिखाई न पडे और सूर्य का पूर्ण उदय हो, तो समझिए कि वर्षा न होगी। जल की प्राप्ति के लिए कुओं का सहारा लीजिए और गगा मे जाकर स्नान कीजिए।

भादो बदी एकादसी, जो ना दीखे मेघ ।
चार मास बरसै नही, घाघ कहै गुभ लेह ।।

—भादो बदी एकादशी को आकाश का मेघरहित होना बताता है कि चार महीना वर्षा न होगी।

चौदस-पूनो जेठ की, वर्षा बरसे जोए।
चौमासे बरसे नही नदियन नीर न होय ।

जेठ की चौदस और पूनो को वर्षा हो जाने से चार मास तक जलवृष्टि नही होती है। नदियाँ भी सूख जाती है।

9

मचले आज़ादी के लाने

लोक-काव्य में जन-जन की वाणी व्याप्त रहती है। धरती के उत्थान-पतन का सच्चा इतिहास इसी काव्य से ज्ञात हो सकता है। काल के अमिट चिह्नों से जीवन-शक्ति पाकर यह लोक-काव्य आगे बढता है और अपने स्वरो से हतोत्साह मानव को गतिशील बनाता है। लोक-काव्य मे एक ओर शान्ति है तो दूसरी ओर ज्वालामुखी-सी तडपन। आग-पानी का यह अलौकिक समन्वय हमे लोक-काव्य मे विशेष रूप से मिलता है। जब-जब मानव हारकर पीछे हटा है तब-तब इस जन-काव्य ने उसे प्रोत्साहित कर आगे बढाया है। चिरन्तन सत्य से समन्वित इस काव्य का विद्रोही स्वर बडा ही सबल और ओजपूर्ण है। सन् 1857 के विद्रोह की गूँज जितनी शक्तिशालिनी इस काव्य मे हुई है उतनी अन्यत्र नही। भारतीय स्वतन्त्रता का आन्दोलन झाँसी की स्वाभिमानिनी धरा से उत्पन्न हुआ था। यह उस बुन्देलखंड भूमि का अश है, जिसने किसी के आगे झुकना तो सीखा ही नही है। वीर बुन्देलो की जन्मदात्री यह धरती सदैव वन्दनीय रही है—

आल्हा ऊदल सदृश वीर जिसने उपजाये।
जिनके साके देश-विदेशो ने भी गाये।
वही जुझौती जिसे बुन्देलों ने अपनाया।
इससे नाम बुन्देलखंड फिर जिसने पाया।
पुरावृत्त से पूर्ण परम प्रख्यात भूमि है।
यह इतिहास-प्रसिद्ध शौर्य - सघात भूमि है।
गढ ग्वालियर सुदृढ कोट नामी कालिंजर।
दुर्गम दुर्ग कुड़ार कठिन कनहागढ नरवर।

छोटे - मोटे और सैकड़ों दुर्ग खडे हैं।
मानो उस प्राचीन कीर्ति के स्तम्भ गढ़े है।
दुर्ग - मालिकामयी दीर्घ दृढ अग - भूमि है।
अरि - दर्पघ्न बुन्देलखड रण रंग - भूमि है···

इस राष्ट्रीय स्वतन्त्रता आन्दोलन को व्यापकता देकर झाँसी की महारानी लक्ष्मीबाई ने जो त्याग किया है वह युग-युगो तक स्मरणीय रहेगा। महारानी स्वयं इस महान् यज्ञ की आहुति बनीं और विश्व को आजादी का मार्ग दिखा गईं। बुन्देलखंड की महिलाएँ आज भी गाती है—

सहर न झाँसी सानी कौ,
बाई साहब मरदानी कौ।

सुदर बनौ दुर्ग दरवाज़ौ,
डंका जहाँ विजय कौ बाजौ।
दुश्मन हार मानकर भाजौ,
वीरवन्त लखरानी कौ।

जाके आस - पास है कोट,
गुरजन की है ऊंची ओट,
बैरिन की ना व्यापै चोट,
यही ठाट रजधानी कौ।

जहाँ पर लक्ष्मीबाई दोऊ
हाथन में तलवार चलाई।
सोनित की दई नदी बहाई।
यही काम था रानी कौ।

देखी सूरत बम्बई जाके,
कलकत्ता लीन्हा मझिया के।
कहें कवि 'दास' सुछंद बना के।
सुना नाम छत्राणी कौ।

इतिहास साक्षी है कि बुन्देलखंड के वीरो ने अपने देश की आज़ादी को बचाने व सुरक्षित रखने के लिए हँसते-हंसते प्राणो को न्यौछावर किया है। 1857 के

विद्रोह की जीवित रखने के लिए यहाँ के कर्मशील योद्धाओं ने शत्रुओं को ललकार कर कहा था—

जौ पानी बुन्देल कौ, झुकवौ जाने नाँय।
कै लौटै तो जीत कै, कै फिर प्राण गवाँय।

—बुन्देलखड का यह पानी झुकना नही जानता है। या तो यह जीतकर लौटता है, या फिर प्राणो को गँवाता है।

इस जन-क्रान्ति मे एक-एक बुन्देला ने सौ-सौ शत्रुओं को मारकर गिराया था—

एक बुन्देला वीर तो, सौ - सौ मार गिराय।
मुड-मुड कट-कट गिरैं, काग-चील मँडराय।
काल भैरों बने।

—एक बुन्देला वीर सौ सौ को मारकर गिराता है। मुड कट-कटकर गिरते है, और कौवे-चील मँडराते है। वे काल-भैरव बन गए है।

बानपुर (बुन्देलखड) के राजा मर्दनसिह ने डटकर अंग्रेजो का मुकाबला किया था। इस वीर की चमचमाती तलवार को देखकर गोरे बकरियों की तरह मिमियाते थे। नाहर की भाँति गर्जना करते हुए राजा मर्दनसिह के साथ हजारों आजादी के दीवाने बुन्देला वीर थे .—

मचले आजादी के लाने,
बुन्देला दीवाने।
मर्दनसिह बानपुर वारे,
नाहर-से गुर्राने।
लखतन मर्दनसिह को गोरा,
छिरिया से मिमयाने।
कहत 'भवानी' सुन लो प्यारे,
मरदन मरद कहाने।

—आजादी के लिए दीवाने बुन्देला मचलने लगे।

बानपुर के मर्दनसिह नाहर (शेर) के समान गुर्राने लगे। मर्दनसिह को देखते ही गोरा बकरी की तरह मिमियाते है। भवानी कहते है—प्यारे, सुन लो, मर्दनसिह सच्चे मर्द (वीर) कहलाने लगे।

अंग्रेज़ो के अत्याचारो एव अनाचारो से भारतीय विकल हो उठे थे। इसीलिए इन्होंने अपनी पूरी शक्ति के साथ इन कूटनीतिज्ञो के विनाश की प्रतिज्ञा की थी—

हमारी मूँछ न गिरने पाये।
चाहे तन माटी हो जाये।
जा धरती बुन्देलखड की,
गोरा चढतो आवै।
मारो - मारो एकउ बदरा,
जियत न जाने पावै।
वो असील कौ नही भवानी,
जो माँ कौ दूध लजावै।

—हमारी मूँछ गिरने न पाये। भले ही शरीर मिट्टी हो जाये। बुन्देल खंड की इस धरती पर, गोरा चढता आ रहा है। मारो-मारो, एक भी बदर, जीवित न जा सके। भवानी कहते है कि वह असल का नही है, जो माँ का दूध लजाता है।

इस आन्दोलन में वीरागनाओं ने भी पर्याप्त सहयोग दिया था। धन-वैभव, ममता-मोह का परित्याग करके ये रण की प्रचड ज्वाला मे कूद पडी थी—

गौरी, बेटा, नहिं रुकवे की,
तैयारी लडवे की।
भई चढाई अपने ऊपर,
अग्रेज़ी पलटन की।
सागर जीत खुरई जीती,
नाराहट कौ दी मुर की।
कहत भवानी चलदो प्यारी,
तपन बुझावू उर की।
कै फिर लौट घरई कौ आबू,
कै यात्रा सुरपुर की।

—बेटा ? गौरी अब नही रुकेगी—लडने की तैयारी हो चुकी है। हमारे ऊपर अग्रेजी पल्टन की चढाई हो चुकी है। सागर को जीतकर खुरई को भी जीत

लिया है। नाराहट की तरफ वह मुड़ गई है। भवानी कवि कहता है कि प्यारी, चलो। (इस युद्ध मे) हृदय की तपन को बुझावे—या तो जीतकर घर को वापस आयेंगे, या फिर स्वर्ग की यात्रा करेंगे।

अजयगढ (बुन्देलखड) के प्रसिद्ध वीर लछमनसिंह दउवा की तलवार तो गोरों के सिर पर काली नागिन के समान दौड़ती थी। इस दउवा की तेज़ असि अंग्रेजो को ककड़ी के जौआ की तरह काट रही थी। वह सचमुच हौआ (भूत) हो गया था।

लछमनसिंह फिरत है दौआ,
काटत ककरी-जौआ।
भगे फिरत अगरिजवा बेकल,
दौआ हो गओ हौआ।
बाँदा से कोड़ी तक मारी,
फौज फिरंगी कौआ।
मन्नालाल टेर कै कै रये,
भाग चले लखनौआ।

—लछमनसिंह दौआ फिर रहे है, वह ककडी के जौआ की तरह काट रहे हैं। अंग्रेज़ व्याकुल होकर भागे फिरते है। दौआ हौवा (भूत) हो गया है। बाँदा से कोड़ी तक धावा बोलकर, कौवे के समान अंग्रेजों की फौज को मार डाला है। मन्नालाल चिल्लाकर कहते है कि लखनौआ (लखनऊ के निवासी) भाग गए।

अंग्रेज़ों ने जिस क्रूरता एव बर्बरता से स्वतन्त्रता चाहने वाले भारतीयों को कुचला था, उसे सुनकर वज्र भी द्रवित हो जाता है। ऐसे दुष्टों के दलन में शीलादेवी ने अपना कालिका-रूप दिखाया था।

बाँदा लुटो रात के गुइयाँ,
शीलादेवी लरी दौर के।
संग में सौक मिहिरियाँ
अंगरेजन से करी लराई,
मारे लोग-लुगइयाँ।

—प्यारी सहेलियो! बाँदा रात में लुट गया। शीलादेवी दौड़कर लड़ी। साथ में सौ स्त्रियाँ थी। अंग्रेज़ो के साथ लडाई की। स्त्री-पुरुषों की मार-काट की।

समथर राज्य के प्रसिद्ध लोहागढ के पठानों ने झाँसी की महारानी लक्ष्मीबाई के विरोधी अंग्रेज़ों की अच्छी खबर ली थी। इन्होंने ज्वार के भुट्टों की तरह गोरों के सिरों को काटा था। यह विद्रोह अत्याचार के विरोध मे था, जिसकी गूँज से धरा और आकाश दोनों ध्वनित हो चुके थे।

लोहागढ के वीर बाँकुरे,
अंगरेजन खों मारें।
भुट्टा-से काटें पल-पल में,
कोउ न आवें द्वारे।
मच गई खोरन कीच खून की,
भागी पलटन गोरी।
देवीदास फतह झाँसी की,
हो यह अरजी मोरी।

—लोहागढ के बाँकुरे वीर, अग्रेजो को मारते है। क्षण-क्षण में वे भुट्टों की तरह उनको काट रहे है। कोई दरवाज़े पर नही आता। गलियों में खून की कीचड़ मच गई है, गोरों की पल्टन भी भाग गई है। देवीदास कहते हैं, यह मेरी प्रार्थना है कि झाँसी की विजय हो।

लोहागढ किले के सरक्षक (किलेदार) रज्जब बेग ने बड़ी बहादुरी से शत्रुओं का मुकाबला किया था; और उन्हे किले मे शरण न देकर पिल्लों की तरह भगाया था—

रज्जब बेग पठान बहादुर,
पकड़ - पकड़ गोरन खों।
पिल्ला-से बाँधत ड्योढ़ी में,
बना-बना ओरन खों।

बहादुर रज्जब बेग पठान गोरों को पकड़-पकड़कर पिल्लों (कुतिया के बच्चों) की तरह ड्योढी मे बाँधते है और दूसरे लोगों को बताते हैं।

आलमपुर, उन्नाव, कोंच, कालपी आदि की जनता ने इस स्वतन्त्रता-संग्राम में पूर्ण सहयोग दिया था।

इस प्रकार आजादी के इस यज्ञ की पावन पावक में जिन वीर-वीरांगनाओं ने अपने प्रिय प्राणों की आहुतियाँ दी हैं वे चिरस्मरणीय एवं वन्दनीय हैं।

10

रहे निरोगी जो कम खाय

शरीर को स्वस्थ रखना बहुत आवश्यक है। स्वस्थ देह से ही हम ससार मे रहते हुए सब कुछ कर सकते है। धर्म की साधना तभी हो सकती है जब हम निरोग हों। लोक-जीवन मे शरीर की प्रधानता को मानते हुए हमारे ग्राम-निवासियों ने स्वच्छ जलवायु मे रहने की सबको सलाह दी है। गाँवो मे शुद्ध हवा मिलती है और यही पवित्र वायु सौ दवाओ के समान है—"एक हवा सौ दवा।" लोक-साहित्य मे हमे अनेक ऐसी कहावते मिलती है, जो स्वास्थ्य-सुधार के लिए सुगम साधन है। इनमें ऐसी बाते कही गई है, जिनको वैद्य भी मानते है। पुराने समय मे हमारे देश में प्रकृत्ति के सहारे से बहुत-से रोगों का निवारण किया जाता था। इसीलिए उस समय का इलाज सरल और सुगम था। जगलों मे मिलने वाली जड़ी-बूटियो को खाकर रोगी कठिन रोगो को जड से मिटा लेते थे। शारीरिक बल की वृद्धि के लिए हर्र, बहेड़ा और आँवला का सेवन लाभदायक बताया गया है। ये सब जगह मिलते है और कुछ पैसों में ही हमे उत्तम ओषधि की प्राप्ति हो जाती है। कहा गया है कि—

हर्र बहेड़ौ आँवलौ घी, सक्कर ते खाय।
बगल मे दाबै हाथि कौ, सौ पेड़ उड़ जाय।

—हर्र, बहेड़ा और आँवले को ऋतु-अनुसार घी और शक्कर के साथ खाने से अत्यधिक बल की वृद्धि होती है। इनका सेवन करने वाला मनुष्य बगल मे हाथी को दाबकर सौ पेड़ उड़ सकता है।

प्रातःकाल खाट से उठते ही जल का पीना बहुत अच्छा बताया गया है।

प्रातःकाल खटिया ते उठि कै,
पिअइ तुरन्तै पानी।

कबहूँ घर माँ वैद न अइहै।

बात घाघ कै जानी।

—खाट से उठते ही जो मनुष्य सुबह पानी पीता है, उसके घर में कभी भी वैद्य नहीं आता।

पानी को सदा छानकर पीना चाहिए। बिना छने पानी के पीने से हमारी देह मे रोग के कीड़े पहुँचते हैं, जिनसे अनेक रोग उत्पन्न हो जाते हैं—

पानी पीजै छानि के, गुरु कीजै जानि के।

भोजन करने के बाद पेशाब करना चाहिए और बाईं करवट से लेट जाना चाहिए। ऐसा करने से देह स्वस्थ रहती है—

खाइ के मूतै सूतै बाउँ, काहे के वैद बुलावै गाँउँ।

कम खानेवाला निरोगी रहता है और गम खानेवाले का कुछ भी नहीं बिगड़ता—

रहै निरोगी जो कम खाय, बिगरै काम न जो गम खाय।

चना एक पौष्टिक अन्न है। इससे अनेक मिठाइयाँ भी बनती हैं। आज भी बहुत से पहलवान कसरत करके भीगे हुए चने चबाते हैं। स्वस्थ रहना हो तो चना खाओ।

खाय चना, रहै बना।

मुखारी (दतौन), दूध और बासी पानी का बड़ा महत्त्व है।

मोटि मुखारी जो करै, दूध विपारी खाय।

बासी पानी जो पियै, तेहि घर वैद न जाय।

स्वास्थ्य-रक्षा के लिए यह जानना ज़रूरी है कि कौन-सी वस्तु किस माह में न खाई जाय। असमय में अच्छी चीज़ के भक्षण से भी देह मे रोग घुस जाता है।

चैते गुड़, बैसाखे तेल,
जेठै पंथ[1], असाढे बेल।
सावन तुरई, भादौं दही।
क्वाँर करेला कातिक मही[2]।
अगहन जीरा, पूसै धना।
माघै मिश्री, फागुन चना।
इन महिनन माँ छाँड़ै जोय।
घाघ न कबहूँ माँदा[3] होय।

1. रास्ता चलना, 2. छाछ, 3. बीमार।

अन्न और जल का प्रभाव मन और वाणी पर पड़ता है, अतः हमेशा शुद्ध अनाज और पानी को ही अपनाना चाहिए ।

जैसौ खाय अन्न, वैसौ होय मन्न।
जैसौ पियै पानी, वैसी होय वानी।

नीचे की पक्तियो मे घाघ ने बताया है कि जो मनुष्य इन वस्तुओ का सेवन करता है वह सदैव सुखी रहता है और रोग उसके पास नही आ पाता—

सावन हर्रे, भादों चीत[1], क्वार मास गुड खायउ मीत।
कातिक मूली, अगहन तेल, पूस मे करै दूध से मेल।
माघ मास घिउ खिचडी खाय, फागुन उठि के प्रात नहाय।
चैत मास मे नीम वेसहती[2], वैसाखे मे खाय जडहती[3]।
'घाघ' कहैं जो जेठहि सोवै, ओकर जर[4] असाढ मे रोवै।

बासी रोटी खाने से बुद्धि का नाश होता है—

वासी रोटी बुद्धि नसाय।
पल-पल मे आलस नियराय।

घुइयाँ और पूडी खाने मे तो स्वादिष्ट है लेकिन पाचन-शक्ति इनके खाने से जल्दी खराब हो जाती है—

जाको मारा चाहिए, बिन मारै बिन घाव।
वाकौ यही बताइए, घुइयाँ-पूरी खाव।

मर्द के लिए खटाई और स्त्री के लिए मिठाई हानिकर है—

गया मर्द जो खाय खटाई, गई नारि जो खाय मिठाई।

भोजन करने के पश्चात् कुछ समय के लिए लेटना स्वास्थ्यप्रद है—

खाइ के परि रहु, मारि के टरि रहु।

मठा का पीना स्वास्थ्य-सुधार के लिए रामवाण औषधि है।

मठा हरै सौ रोग।

तेल की मालिश देह में कान्ति लाती है—

तेल मलै सें चमकै देह।
प्रेम करे सें बढै सनेह।

स्वास्थ्य-विषयक ये अनुभूत प्रयोग बड़े ही लाभदायक और उपयोगी हैं।

---

1. चीता, 2. खाना, 3. एक प्रकार का चावल (भात), 4. ज्वर।

11
ओछो मंत्री राजै नासै

लोक-साहित्य मे सब विषयों को स्थान मिला है। जन का कल्याण ही लोक-साहित्य का प्रमुख उद्देश्य है। राजा और प्रजा का सम्बन्ध यदि सुन्दर है तो राज्य चिरस्थायी बनेगा अन्यथा प्रजा विद्रोही बनेगी और शासक को धूल मे मिलाकर ही शान्त होगी। राजनीति के सम्बन्ध मे जो कुछ हमारे लोक-साहित्य मे प्राप्त है वह सत्य और अनुभवसिद्ध है। शासन-व्यवस्था को सुरक्षित रखने के लिए हमारे शासकों को उन सूक्तियो पर हमेशा विचार करते रहना चाहिए। साधारण मनुष्यों को भी सासारिक जीवन को सुखमय बनाने के लिए इन कहावतो को कभी नहीं भूलना चाहिए। ये नीति-वाक्य है और जीवन-सफलता के लिए साधन मत्र है।—कुमत्री राजा का विनाशक होता है—

ओछो मत्री राजै नासै, ताल विनासै काई।
सान साहिबी फूट विनासै, घग्घा पैर बिवाई।

राजा का निर्दयी होना प्रजा के लिए घोर शाप है—

चाकर चोर राज वे पीर।
कहै घाघ का राखै धीर।

शुक्र नीति में भी कहा गया है कि—

कुमंत्रिभिर्नृपो रोगी कुवैद्यैः कुनृपैः प्रजा।
कुसंतत्या कुल चात्मा कुबुध्याहीयतेऽनिशं।

—कुमंत्रियों से राज, कुवैद्यों से रोगी, कुत्सित राजाओं से प्रजा, खोटी सन्तान से कुल, कुबुद्धि से आत्मा सदैव नष्ट होते है। प्रजा राजा का अनुकरण करती है—यथा राजा, तथा प्रजा।

जैसो राजा, तैसी प्रजा।
पापी राजा, पापी प्रजा।

भेद जानने वाला नौकर, सुन्दर स्त्री, पुराना कपड़ा और कुराजा सबके लिए कष्टदाक होते हैं।

भेदिया सेवक, सुन्दर नारि।
जीरन, पट कुराज दुखचारि।

नस काटने काली पनही (जूता), प्रथम सन्तान बेटी, बात काटने वाली भार्या और पागल भाई किसको दुखी नही करते ?

नसकट पनही, बतकट जोय।
जो पहिलौठी बिटिया होय।
पातरि[1] कृषी बौरहा[2] भाय[3]।
घाघ कहै दुख कहाँ समाय।

चटक-मटक दिखाने वाली युवती से किसको चैन मिला है ? मारने वाला बैल शान्ति भग करता है—

बैल मरकहा[4] चमकुल[5] जोय[6]।
वा घर ओरहन[7] नित उठि होय।

ससार में महामूर्ख तीन हैं—

घर घोडा पैदल चलै, तीर चलावै बीन।
थाती धरै दमाद घर, जग मे भकुआ[8] तीन।

प्रायः कसम खाकर लोग विश्वास दिलाते है, लेकिन इन लोगो का शपथ खाने पर भी यकीन नही करना चाहिए।

चोर, जुआरी, गँठकटा, जार[9] औ' नार छिनार[10]।
सौ सौगधे खायँ जौ, घाघ न कर इतबार[11]।

कृषि, पत्र-लेखन, प्रार्थना आदि कार्य मनुष्य को स्वय करना चाहिए। दूसरों से करवाना उचित नही है—

खेती पाती बीनती, औ' घोडे का तग।
अपने हाथ सँवारिए, लाख लोग हों संग।

सच्चा मित्र वही है जो विपत्ति मे साथ दे—

जो आपत्ति मे आवै काम।
वह सुमित्र है सुख कौ धाम[1]।

घाघ ने रिश्वतखोर हाकिम को महापातकी बताया है। उससे शासन में हीनता आती है। अतः इस प्रकार के अधिकारी को तो गहरे पानी मे डुबो देना ही ठीक है।

1. कमजोर। 2. पागल। 3. भाई। 4. मारने वाला। 5. चटक-मटक दिखाने वाली। 6. स्त्री। 7. उलहना 8. मूर्ख। 9. परस्त्री-सेवी। 10. चरित्रहीन। 11. विश्वास। 12. घर।

नारि करकसा, कटहा[1] घोर[2], हाकिम होइ के खाइ अँकोर[3]।
कपटी मित्र पुत्र है चोर घग्घा इनको गहिरे बोर।

ससार मे धनवान ही सब कुछ है। धन के रहने पर मनुष्य की सर्वत्र इज्जत होती है, सगे-सम्बन्धी भी पूछते है और भाई-बहन भी प्यार करते है। दुनिया मे धनहीन को सब ठुकराते है। किसी ने ठीक कहा है कि "बहन भलो ना भैया, सबसे भलो रुपैया।" "नाम कमावै पैसा, काम बनावै पैसा।" "यदि हाथ पोला तो जगत भोला।" "सकल बिगड़ गई कबसें, पैसा चुग्यो तबसें।" धन की प्रशंसा में श्री भर्तृहरि ने भी कहा है—

यस्यास्ति वित्तं स नरः कुलीनः
स पण्डितः स श्रुतवान गुणज्ञः
स एव वक्ता सच दर्शनीय,
सर्वे गुणाः काञ्चनमाश्रयन्ति।

—जिसके पास द्रव्य है वही नर कुलीन, पडित, गुणज्ञ, वक्ता और दर्शन-योग्य है, इससे यह सिद्ध हुआ कि सब गुण सुवर्ण के आश्रय रहते हैं।

राज न किसी का मित्र हुआ है और न वेश्या कभी तपस्विनी बन सकती है।

'राजा मित्र न वेश्या सती'

राजा मित्र केन दृष्टं श्रुतवा ? राजा को मित्र होते किसने देखा-सुना है ?—किसी ने नही।

एक को पूजना ही अच्छा होता है सबके आगे माथा झुकाने वाले की दशा कभी नही सुधर पाती। इसीलिए कहा है—

शकर भजो या राम।
जो पूरे सब काम।

श्री भर्तृहरि का भी यही मत है—

एको देवः केशवो वा शिवो वा
एक मित्रं भूपतिर्वा यतिर्वा।
एको वासः पत्तने वा वने वा
एका नारी सुन्दरी वा दरी वा।

—एक देव को ग्रहण करना चाहिए—केशव हो या शिव; एक मित्र करना चाहिए—राजा हो या तपस्वी; एक जगह वास चाहिए—नगर हो या वन और

1. काटने वाला। 2. घोड़ा। 3. रिश्वत।

एक स्त्री से प्रीति हो—सुन्दरीहो या कन्दरा हो।

बुरे समय में अपने भी पराए हो जाते हैं। कोई भी साथ नहीं देता। इसीलिए कहावत प्रचलित है कि 'समय परै सब करै रुखाई।' उर्दू के एक शायर ने ठीक ही कहा है कि

होता नही है कोई बुरे वक्त का शरीक[1]।
पत्ते भी भागते हैं खिज़ा[2] मे शजर[3] से दूर।

× ×

लोक-साहित्य की निम्न नीतिपरक कहावतें अक्षरश. सत्य है—

हितू बिना को काके आवे।

—बिना प्रेम के कौन किसके पास आता है ?

सो जीते जो पहले मारे।

× ×

सो सताइ है सो मिट जै है।

× ×

जाको ऊँचा बैठना, जाको खेत निचान।[4]
ताको बैरी का करे, जाकै मीत दिवान।

× ×

जो तुम तकौ[5] बुराई पर की।
हुई है बरबादी निज घर की।

× ×

जैसा देस वैसा भेस।

× ×

दीवाल में आला, घर में साला।

× ×

खाओ जैसा मन चाहे।
पहिरो जैसा जन चाहे।

× ×

टूटी डाढ़ बुढापा आया, टूटी खाट दलिद्दर छाया।

× ×

गया पेड जहँ बगुला बैठा, गया गेह जहँ मुडिया पैठा।
गया राज जहँ राजा लोभी, गया खेत जहँ जामी गोभी।

---

1. हिस्सेदार। 2. पत्तझड। 3. पेड़। 4. गहरा। 5. देखना।

12

छुआछूत को रोग बुरो है

संसार में सब समान है। किसी को बडा या छोटा कहना भूल है। मनुष्य-मनुष्य मे भेद करना हमारी अज्ञानता है। ईश्वर ने समान भाव से सबको अपनाया है। उसकी दृष्टि मे छूत अथवा अछूत का भेद कभी नही रहा। ऐसी अवस्था में छुआछूत की कल्पना असत्य है। मनुष्य ने अपने स्वार्थ के लिए यह जाति-भेद किया है जिसका न कोई अर्थ है और न जिसका हमारे शास्त्रो मे समर्थन हुआ है। परमात्मा विश्व-व्यापक है। वह प्रत्येक जीव में निवास करता है। कोई ऐसा देश, काल, दिशा आदि नही है जहाँ पर वह विद्यमान न हो। भक्त के प्रेम-वश वह प्रकट हो जाता है—

> हरि व्यापक सर्वत्र समाना, प्रेम ते प्रगट होहिं मैं जाना।
> देस काल दिसि विदिसिहु माही, कहहु सो कहाँ जहाँ प्रभु नाही ।।'
>
> —रामचरितमानस (बालकाण्ड)

जिन्हे हम अछूत कहते है वे ही हमारी सच्ची सेवा करते हैं। जो हमारा मल-मूत्र उठाकर फेकता हो, जो हमारी गन्दी नालियों को साफ करता हो, और अपने आपको रोगो में फँसाकर हमे रोगमुक्त बनाता हो, क्या हम उसे अछूत कहे और उससे दूर रहे ? ऐसे सच्चे सेवक और प्रेमी को तो हमे गले लगाना चाहिए। हम कुत्तो को पलग पर बैठाते है, बिल्ली को दूध पिलाते है, पशुओ को चूमते है, लेकिन मनुष्य से घृणा करते है, सो भी उस मनुष्य से जो हमारी सेवा में दिन-रात रहता है और हमारी कुशलता चाहता है। यह कितने दुख की बात है !

भगवान् राम के हम भक्त है। नित्य हम मन्दिरो में उनकी पूजा करते हैं, उनकी वन्दना करते है, और उनसे सद्गुणो की याचना करते है, लेकिन उनके उपदेशों को हम जान-बूझकर भूलते हैं और भूलने की कोशिशें भी करते हैं—क्या यही हमारी भगवान् के प्रति भक्ति है। पतित-पावन भगवान् रामचन्द्र ने कहा है—

इहि विधि जीव चराचर जेते, त्रिजग देव नर असुर समेते।
अखिल विश्व यह मोर उपाया, सब पर मोहि बराबर दाया ।।

—ससार मे जितने चराचर प्राणी, देवता, मनुष्य, राक्षस है उन सबको मैंने ही उत्पन्न किया है और सब पर मेरी समान दया है। अब छुआछूत का भेद कहिए कहाँ है? भगवान् कृष्ण ने भी यही कहा है कि मैं सभी प्राणियो मे समान रूप से हूँ—न मेरा किसी से राग है, न द्वेष है। "समोऽह सर्व भूतेषु न मे द्वेप्योस्ति न प्रियः।" अपने आपको ऊँचा मानने वाले बताएँ कि उनमे कौन-सी ऐसी चीज़ है जो अछूतो मे या नीचो मे नही है! शरीर की जो बनावट अछूतों में है वही उच्च वर्णो मे है। अपने आपको पवित्र मानने वाले पहले अपनी आत्मा को तो देखे। जितनी गन्दगी उनके अन्दर है उतनी अछूतों मे नही है। भंगी की सेवा से प्रसन्न होकर हमारे पूज्य बापू ने तो भगी के घर मे जन्म लेने की आकाक्षा प्रकट की है। अतः जो अछूत हमसे अलग नही है, हमारे ही भाई है और हमारी ही जो सेवा करते रहते है, उन्हे पृथक् मानना घोर पाप है। बापूजी की वाणी मे विश्वास रखने वाले हम लोगो को-बापू के इस कथन को हृदय मे अकित कर लेना चाहिए—

"जो किसी भी बात मे हमसे अलग नही है और जो अनेक तरह से समाज की भारी सेवा कर रहा है, ऐसे मानव जाति के एक बडे जन-समूह को बाहर कर देने का घोर पाप हमने किया है। इस पाप मे से हिन्दू-धर्म जितनी जल्दी निकल जाय, उतनी ही उसकी बडाई और प्रतिष्ठा है।

"जैसे एक रत्ती सखिया से लोटा भर दूध बिगड जाता है उसी प्रकार अस्पृश्यता से हिन्दू-धर्म भ्रष्ट हो जाता है। अस्पृश्यता की रूढि में धर्म नहीं है, किन्तु अधर्म है।

इस जन्म मे मुझे मोक्ष न मिले तो मेरी आकाक्षा है कि अगले जन्म में किसी भंगी के घर मेरा जन्म हो।"

महात्मा कबीर ने तो छूत (छोत) शब्द पर विचार करते हुए कहा है कि यह सब संसार छूत से उत्पन्न है। अपने आपको पवित्र मानने वालो को सासारिक मनुष्य की भाँति जन्म नही लेना चाहिए। छूत न कोई भाव है और न विचार।

काहे को कीजै पाँडे छोत विचारा।
छोति ही ते उपजा सब ससारा।

हमारे कैसे लोहू, तुम्हारे कैसे दूध ।
तुम कैसे ब्राह्मण, पाडे, हम कैसे सूद !

छोति छोति—करता तुम्ह ही जाए।
तो गर्भवास कहे को आए।
जनमत छोत मरत ही छोति।
कहै कबीर हरि की विमल जोति।

कविवर ठा० गोपालशरण सिह ने 'अछूत' शीर्षक कविता में जो प्रश्न अछूत से करवाए है उनका उत्तर मिलना असम्भव है।

पत्थर है छूते और धूल को भी छूते आप,
फिर किस कारण से हमको न छूते है !
यह तो बताइए क्या आप मे विशेषता है ?
आपके करो से क्या सुधा के बिन्दु चूते हैं।
आप ही कहे कि आप कैसे है विचारवान,
हमको न छूते किन्तु छूते नित्य जूते हैं।
हम तो सदैव मानते है अपने को पूत,
कैसे हैं अछूत हम पाप से अछूते है।

गोस्वामी तुलसीदास ने तो समस्त ससार को राममय मानकर चराचर की वन्दना की है—

सियाराममय सब जग जानी।
करहुँ प्रनाम जोर जुग पानी॥

भक्तप्रवर श्री हरीरामजी व्यास तो वृन्दावन के भक्त स्वपच की पदरज को पूज्य मानते है और उसकी जूठनि को ग्रहण करने की कामना करते हैं—

'व्यास' दास हरिजन बड़े, जिनको हृदय गभीर।
अपनो सुख चाहत नही, हरत पराई पीर।
वृन्दावन के स्वपच को, रहिए सेवक होय।
ताते भेद न कीजिए, पीजै पद-रज धोय।
व्यास कुलीननि कोटि मिलि,पडित लाख पचीस।
स्वपच भक्त की पानही, तुलै न तिनके सीस।
व्यास मिठाई विप्र की, तामे लागे आगि।
वृन्दावन के स्वपच की जूठनि खैये माँगि।

भगवान् का भक्त जीव-मात्र हो सकता है। जाति-पाँति अथवा छूत-अछूत

का बन्धन भक्ति नही मानती है। भगवान् को तो केवल प्रेम ही वांछनीय है—

रामहि केवल प्रेम पियारा।
जान लेहुँ सो जानन हारा ॥

—रामचरितमानस

जो हरि का भजन करता है, वह हरि का हो जाता है। जाति का भेद-भाव भगवान् राम ने कभी नही स्वीकार किया है—

जाति-पाँति पूँछहि नहि कोई।
हरि को भजै सो हरि का होई।

परमात्मा तो अपवित्र को पवित्र करते है। उनके दर्शन से पापी भी पूज्य बन जाता है। फिर किसी को अछूत कहकर मन्दिर मे न जाने देना कहाँ की बुद्धिमत्ता है ? क्या पापी को देखकर भगवान् क्रुद्ध होते है ? क्या भगवान् ने नीचों को नही अपनाया है ? जिन्हे हम अज्ञानवश अछूत कहते है, वे भगवान् के प्रिय भक्त हुए है, और संसार उनकी कीर्ति आज भी गा रहा है। सब जानते है कि भगवान् राम ने शबरी (भीलनी) के सत्कार को स्वीकार किया था। उसके जूठे बेरो को बडे स्वाद से खाया था। इस पापमयी नारी का उद्धार करके भगवान् राम ने भक्ति ही के सम्बन्ध को स्वीकार किया है—

कद मूल फल सुरस अति, दिए राम कहुँ आनि।
प्रेम सहित प्रभु खाए, बारबार बखानि ॥
पानि जोरि आगे भई ठाढी, प्रभुहिं बिलोकि प्रीति अति बाढी।
केहि विधि अस्तुति करौ तुम्हारी, अधम जाति मै जड़मति भारी ॥
अधम ते अधम अधम अति नारी, तिन्ह महँ मै मतिमन्द अघारी।
कह रघुपति सुन भामिनि बाता, मानउँ एक भगति कर नाता ॥

—रामचरितमानस (अरण्यकाण्ड)

ऐसी स्थिति में हमें छूत-अछूत के कल्पित भेद-भाव को छोडकर सबके लिए भगवान् के दर्शन करने की व्यवस्था करनी चाहिए। हरिजनो से हमारे मन्दिर अपवित्र न होगे। ईश्वर का आलय सबके के लिए खुला है। लोकमान्य तिलक ने स्पष्ट कहा है कि

"अस्पृश्यता एक ऐसी रूढ़ि है, जिसका नाश होना ही चाहिए। जो अस्पृश्यता मरने पर नही रहती, जो अस्पृश्यता परमेश्वर के घर जाने में रुकावट नहीं डालती,

उसे अपने समाज मे चलने देना परमेश्वर के प्रति पाप करने जैसा है।

"अस्पृश्यता का कोई शास्त्रीय आधार नही। परमेश्वर के मन्दिर का दरवाज़ा किसी के लिए बन्द नही है। और यदि वह बन्द हो जाय तो परमेश्वर परमेश्वर नहीं, ऐसा मैं मानता हूँ।"

छुआछूत एक महान् बीमारी है, इससे हमें बचना चाहिए। किसी को अछूत कहना मानव-धर्म के विरुद्ध है।

13

भैया, धरती का दे दान

भैया, तेरा ही भाई भूखा फिर रहा है, उसके शरीर पर एक फटा कुर्ता भी नही है। उसके पैरो मे जूते नही है। जवानी मे ही उसका सुन्दर चेहरा सूख गया है। उसकी झोपड़ी मे उसके बाल-बच्चे भूख के मारे तडप रहे है। क्या तुझे दया नही आती ? वह तेरा ही भाई है। तेरे ही गाँव में रहता है। तू हलुआ-पूरी उड़ाए, और तेरा भाई एक रोटी के लिए तरसे, क्या यह तेरे लिए कलक नही है ? तू महल मे रहे और तेरा ही भाई टूटी झोपडी मे अपनी राते काटे, यह सब तू देखकर चुपचाप हँसता है। यह कब तक चलेगा ? एक दिन तुझे अपनी इस अज्ञानता पर पश्चात्ताप करना पड़ेगा। भैया, खाओ और दूसरे को भी खाने दो। तुम कपड़े पहनो और दूसरे को भी कपडे पहनने दो। तुम भी रहो और दूसरे को भी रहने दो। तभी तुम जीवित रह सकते हो। दूसरों के दुख से दुखी होना और यथाशक्ति दूसरे के दुख को दूर करना मनुष्य का धर्म है। यदि तुम दूसरे को सुखी नही बना सकते हो तो तुम भी सुखी रहने की आशा छोड़ दो। हमारे पूज्य बापू ने भारत की दीनदशा को देखकर लँगोटी पहनी थी। वैभव की गोदी में पलने वाले हमारे पण्डित नेहरू ने अपने देशवासियो की दयनीय अवस्था को दूर करने के लिए ही जेलों की कठिन यातनाएँ सही। इन महापुरुषो के तप और त्याग ने हमे आज स्वतत्र कर दिया है। भैया, तुम भी अपने भाइयो की कुछ सहायता करो। तुम सम्पन्न हो, धनवान हो, भूमिपति हो। तुम्हारे पास सैकड़ों बीघा जमीन है, और तुम्हारा भाई दो एकड़ ज़मीन के लिए तरसता है। क्या इसका तुम अनुभव नही कर सकते ? ज़मीन अचला है, यह किसी के साथ नही गई है। हजारों शासन हुए और मिट गए, लेकिन ज़मीन का एक छोटा भी टुकड़ा वे अपने साथ न ले जा सके। खाली हाथ मनुष्य जन्म लेता है और खाली हाथ वह मरता है। फिर इतना लोभ, भैया, तुम क्यों करते हो ? कुछ सोचो और समझो।

यदि तुम सुख से रहना चाहते हो तो अपने गरीब भाइयों को भी सुखी बनाओ, नही तो उनकी आहे तुम्हे मिटा देगी। तुम्हारे ही पास रहने वाला भूखा भाई तुम्हे सुख से न खाने देगा। भैया ! भगवान् की कृपा से तुम्हारे पास आवश्यकता से अधिक ज़मीन है, तुम्हे चाहिए कि उसका कुछ भाग तुम प्रसन्न होकर अपने गरीब भाई को दे दो और उसकी दुआएँ लेकर अपने आपको भाग्यशाली बनाओ। भूखा कब तक अपने पेट को बाँधकर रह सकता है ? उसके भी दिल है, उसके भी मन मे अपने बच्चो के लिए प्यार है। भूखा क्या नही करता ? वह विवेकहीन होकर अनुचित कार्य भी कर बैठता है। अत. देश मे, ग्राम मे और समाज मे सुख-शान्ति रखने के लिए, भैया, अपनी अधिक ज़मीन मे से कुछ अपने भाई को भी दो, जिससे वह अपना पेट भर सके और अपने छोटे-छोटे बच्चो को जिला सके। ज़मीन पर सबका अधिकार है। जिस प्रकार आकाश, हवा, जल सबके लिए भगवान् ने उत्पन्न किए है, उसी प्रकार पृथ्वी सबके लिए है। इस पर किसी एक व्यक्ति का अधिकार होना पाप है, महापाप है, घोर पाप है। ज़मीन पर वही अपना अधिकार रख सकता है जो इसमे अपने-आपको मिला दे, जो उसकी धूलि मे अपने रक्त को सुखा दे, और जो इसे ही अपनी सच्ची माता माने। और वह किसान है, जिसने पृथ्वी माता की तन-मन-धन से सेवा और पूजा की है। जिसके हाथ मे हल है, वही पृथ्वी का मालिक है। जो अन्न उत्पन्न करके जग का पेट भर सकता है, वही पृथ्वी को अपनी बना सकता है। दूसरा नही। भैया, यह धरती उस किसान की है—

"जो मिट्टी के सग-साथ है,
तपकर, गलकर, जीकर, मरकर
खपा रहा है जीवन अपना
देख रहा है मिट्टी में सोने का सपना।
मिट्टी की महिमा गाता है।
मिट्टी के ही अन्तस्तल में,
अपने तन की खाद मिलाकर,
मिट्टी को जीवित रखता है।
खुद जीता है।
यह धरती है उस किसान की।

—श्री केदारनाथ अग्रवाल

दीनों का मसीहा, अनाथों का भगवान्, असहायों का सहारा और निर्बलों का बल सत विनोबा आज धरती के दान के लिए झोली फैलाए हुए है। भैया ! तुम्हे उसकी झोली भरनी है। तुम्हारी उदारता की आज परीक्षा है। यदि इस सत की झोली खाली रही तो समझना कि मानवता का पेट भी खाली रहेगा। भूमिदान की आवाज़ आज विश्व-व्यापनी बन चुकी है, उसको तो सुनना ही होगा। हमारे कवियों का स्वर भूमिदान की पुकार से ओजमय हो चुका है। उनकी अनुभूतियो में हमारा दीन समाज साकार हो रहा है। इन सरस्वती के आराधको ने भूमि-दान-यज्ञ की क्रान्तिपूर्ण लपटों की ज्वाला को देख लिया है। वे शान्ति, क्रान्ति, विकास, प्रकाश, समृद्धि, समत्व आदि के लिए भूमिदान को ही महानतम साधन मान चुके है। राष्ट्रीय कवि दिनकर कह रहे है—

सुरम्य शाति के लिए, जमीन दो, ज़मीन दो।
महान् क्रान्ति के लिए, ज़मीन दो, जमीन दो।
जमीन दो कि देश का अभाव दूर हो सके।
ज़मीन दो कि द्वेष का प्रभाव दूर हो सके।
ज़मीन दो कि भूमिहीन लोग काम पा सकें !
उठा कुदाल बाजुओं का ज़ोर आज़मा सकें।
महाविकास के लिए, जमीन दो जमीन दो।
नये प्रकाश के लिए, ज़मीन दो, जमीन दो।

× ×

ज़मीन चाहिए, समाज के समत्व के लिए।
स्वराज्य के लिए, स्वदेश के महत्त्व के लिए।
मनुष्यता के मान के लिए जमीन चाहिए।
बहुत दुखी किसान के लिए ज़मीन चाहिए।
निःस्वत्व दीन के लिए जमीन दो जमीन दो।
क्षुधार्त विश्व के लिए ज़मीन दो जमीन दो।

× ×

भूखा मानव-समाज सजग है। वह अब भूखा नही सो सकता। उसने अपने अधिकारों को भी समझ लिया है। हमारी दयालु सरकार ने प्रण किया है कि उसके शासन में न कोई वस्त्रहीन रहेगा और न कोई भूखा। भैया ! तुम उस

भारत के निवासी हो जिसने सदा प्यासे को जल पिलाया है और क्षुधित को भर-पेट भोजन दिया है। अपने देश की परम्परा को याद करो और जी खोलकर भूमि का दान दो। खून-खराबी रोकने के लिए, हिंसा-भाव की शान्ति के लिए, अशान्त वातावरण को शान्त करने के लिए तथा दानवता को मानवता मे परिवर्तित करने के लिए भूमि-दान अत्यन्त आवश्यक है। हमारे शास्त्रो मे भूमिदान की बड़ी महिमा है—

"भूमि दानात्परो धर्मस्त्रैलोक्येऽपि न विद्यते।
पदैक मात्र दानेन तस्य विष्णु पुरे स्थिति"॥

—बृहत्पाराशरी

—भूमिदान से उत्तम दान त्रिलोक में कोई नही है। एक पाद भी भूमिदान करने वाला पुरुष विष्णुलोक वासी होता है।

न स्याद्दानात्परो धर्मस्तद्धृतेन परं स्वघम्।
तस्मात्तां यत्नतो दद्याद्धरणं च विवर्जयेत।

—भूदान से परे कोई दूसरा धर्म नहीं है और दी गई भूमि के हरने से कोई दूसरा बड़ा पाप नही है अतः भूमिदान अवश्य करना चाहिए और भूमिहरण न करना चाहिए।

बाबा ! धरती का दे दान
कहता यह भूखा भगवान।

—सन्त तुकड़ोजी

◇

रेखाएँ परिश्रम की बूँदो से मिटा सकते है। उद्योगी मनुष्य ही लक्ष्मी प्राप्त कर सकता है। कोई ऐसा काम नही है, जिसे आदमी न कर सके। अभ्यास करने से कठिन काम भी सरल हो जाता है। नेपोलियन का कहना था कि संसार में कुछ भी असम्भव नही है। मूर्ख भी अभ्यास करके बुद्धिमान बन जाता है।

करत-करत अभ्यास के, जडमति होत सुजान।
रसरी आवत जात ते, सिल पर होत निसान॥

जुआ खेलना, ताश खेलना, तम्बाकू पीना, शराब पीना, चाय पीना, गांजा पीना आदि सब बुरा है, इनसे बचिए। इन कामों मे पड़कर आप समय खोएँगे और अपनी गाढ़ी कमाई का सत्यानाश करेंगे। शराब पीने वाले की जो दुर्गति होती है उसे सब जानते हैं। वह नशे मे पागल बन जाता है और सबको गालियाँ बकता है। माता-बहन के भेद को भूलकर वह पशु बन जाता है और कभी-कभी नालियों मे गिर पडता है। बेहोशी मे वह अपने बदन की सुध भूल जाता है। कुत्ते उस पर पेशाब करते है। गाजा, चरस और चडू फेफड़ो, दिल और हाज़मे को बिगाड़ देते हैं। इनको पीने वाले प्रायः क्षय रोग के शिकार बन जाते हैं। चाय में एक प्रकार का विष होता है जो हमारे स्वास्थ्य को नष्ट करता है। जुआ खेलने वालों को दुनिया जुआरी कहकर धिक्कारती है। इन बुरे व्यसनो से बचकर हमें अच्छे कामों में अपना समय लगाना चाहिए। हो सकता है कि हम मरकर पशु बनें, पक्षी की योनि में जन्म ले अथवा कीड़े बनकर दूसरो से खाए जायँ।

आज हमारी सरकार ने अनेक घरेलू उद्योगों को चालू किया है। इनको सीखकर हम रुपया कमा सकते हैं और समय का सदुपयोग भी कर सकते हैं। जिन भाइयों के पास अधिक समय है वे चरखा कातना और कपड़ा बुनना अवश्य सीखें। खादी हमारे शरीर को ढँकती है और चर्खा हमारा जीवन-साथी है, यह पेट-भरैया है। हमारे पूज्य बापू ने चर्खे द्वारा ही हमें स्वराज्य दिलाया है। प्राचीन काल मे भी चर्खा चलाकर हमारी माताएँ और बहनें अपना समय काटा करती थीं। यदि घरेलू-उद्योगो के लिए आपके पास धन नही है तो मत घबराइए। हमारी सरकार आपको धन देगी और उचित शिक्षा भी। कहिए, फिर आप क्यों अपने समय को बरबाद करते है? मन मारकर न बैठिए, हताश न होइए। आप अमृत-पुत्र है। ऋषियों की सन्तान हैं। आप में शक्ति है, बल है और बुद्धि है।

नर हो, न निराश करो मन को,
कुछ काम करो, कुछ काम करो।
जग में रहकर कुछ काम करो।
यह जन्म हुआ किस अर्थ अहो,
समझो, जिसमें यह व्यर्थ न हो,
नर हो न निराश करो मन को।

जहाँ समाज है, वहाँ झगड़े भी होते है। इन आपसी झगड़ों को आप स्वयं निपटाइए। दो-चार भले आदमियो की सलाह से आप अपने गाँवों के झगडों को को सुगमता से निपटा सकते है। कचहरी में जाकर समय और धन का नाश होता है। जिस रुपए को आपने अपनी मेहनत से कमाया है, उसे आप दूसरो की ज़ेबों मे न डालिए। कचहरियों मे लडने वाले जीतकर भी रोते है। पचायतों की स्थापना इसीलिए हुई है कि आप अपने भाइयों से ही सच्चा न्याय प्राप्त कर सके। पचो को आप ही तो चुनते है यदि कोई पच घूस लेता है अथवा योग्य नहीं है तो उसे आप ही हटा सकते है। इसलिए भूलकर भी आप न्याय के लिए कचहरियों मे मत जाइए। पहले तो आपस मे लडना ही बुरा है। पशु ही लड़ा करते है। आप मनुष्य है, मनुष्य का स्वभाव शान्त और नम्र होता है। जो मनुष्य जरा-जरा-सी बातों पर लड़ते-झगड़ते है वे अज्ञानी कहलाते है। इस अज्ञानीपन को आप शिक्षा प्राप्त करके दूर करें और सच्चे मानव बने, तथा दूसरों को भी बनाएँ। तभी आप सुख से रह सकेंगे। ग्राम-स्वराज्य में आपके गाँव स्वर्ग बनेंगे और आपकी सब चिन्ताएँ और आपदाएँ नष्ट हो जाएँगी। हमारे बापू प्रत्येक गाँव को स्वर्ग बनाना चाहते थे।

रात-दिन मे कम-से-कम आपको एक बार भगवान् का भी नाम लेना चाहिए। भगवत्पूजा और वन्दना हमारे जीवन मे पवित्रता लाती है।

जिसने हमें मनुष्य बनाया है उसे भूलना महान् कृतघ्नता है। भगवान् सर्वत्र है। उसके दर्शन आज भी कर सकते है। मन को पवित्र कीजिए। भगवान् आप आपके सामने आयेगे। सत्य बोलना, नम्र रहना, दूसरों की स्त्रियो को माता के समान मानना ही भगवत्प्राप्ति के उपाय है।

सत्य वचन अरु दीनता, पर तिय मातु समान।
इतने में हरि ना मिलैं, तुलसीदास जवान॥

× × ×

सबसे हिल-मिलकर रहिए। दूसरो के दुख मे दुखी होना और दूसरों के सुख में सुखी होना सीखिए। ईश्वर की कृपा से यदि आप धनवान हैं तो घमण्ड न कीजिए। धन किसी के पास हमेशा नही रहता। यह लक्ष्मी चचला है। आज आपके पास है, कल दूसरे के पास चली जाएगी। इसलिए धन पाकर दूसरोंकी सहायता करो। दूसरे भाइयों के कष्टो को मिटाओ। अपने देश की सेवा करो। फिजूलखर्ची न करके अपनी दौलत देश-कल्याण के लिए अर्पित कर दो। कवि गिरधर ने क्या ही अच्छा कहा है—

दौलत पाय न कीजिए सपने मे अभिमान।
चंचल जल दिन चारी को, ठाउँ न रहत निदान।
ठाउँ न रहत निदान, जियत जग मे यश लीजै।
मीठे वचन सुनाय, विनय सबही सों कीजै।
कह गिरधर कविराय, अरे ये सब घट तौलत।
पाहुन निसि दिन चार, रहत सब ही के दौलत।

× × ×

हम आज अंध विश्वासों के शिकार बने हुए हैं। ये अधविश्वास हमारे लिए घातक हैं। इनको छोड़ना ही पड़ेगा। सामाजिक कुरीतियों में फँसकर हमे अनेक कष्ट भोगने पड़ रहे है। समय बदल चुका है। जो प्रथाएँ अथवा रीतियाँ हमारे लिए अहितकर हैं, उन्हे हम छोड़े। समय के साथ चलने वाला मनुष्य ही आगे बढ़ता है और अपना कल्याण करता है। गाँवों में रहते हुए हमें विवाहों में अनुचित व्यय करना पड़ता है जिसके लिए पूँजीपतियों से कर्ज लेकर हमे उनकी गुलामी करनी पड़ती है। ऐसी कुरीतियों को छोड़िए जिनमे आपका हित नही है। जीवन आपका थोड़ा है और काम आपको बहुत करना है। इसलिए मानव-जीवन को पाकर सत्कर्म कीजिए और परोपकार मे लग जाइए। विषय-वासना मे लीन रहना उचित नही है। यदि आपने परोपकार न किया तो मनुष्य शरीर पाने से क्या लाभ हुआ?

लाभ कहा मानुष तनु पाए।
काय वचन-मन सपनेहुँ कबहुँक, घटत न काज पराए।।

—विनय-पत्रिका

काज कहा नरतनु धरि सार्‌यो।
पर उपकार सार स्नुति को जो, सो धोखेहु न विचार्‌यो।

परोपकार के समान पुण्य नही है और पर-पीड़ा के समान पाप नही है। यह अठारह पुराणों का कहना है—

अष्टादश पुराणां, व्यासस्य वचनद्वयम्।
परोपकारः पुण्याय पापाय पर पीड़नम्।

× ×

परहित सरिस धरम नहिं भाई।
पर पीड़ा सम नहिं अधमाई॥

—गोस्वामी तुलसीदास

× ×

मानस बड़े भाग से होवै।
रजउ छोड़ दो लोभै।
मिलकै चाल चलौ दुनिया में
सबसें राख धरोवै।
जिन्दगानी कौ कौन भरोसो,
जुवन जात रयँ रोबै।
भरे तला में सपरत ईसुर,
नंगे कहा निचौवै॥
मानुस होने कै ना होने
रजउ बोल लो नोनें।
जियत-जियत लों सबसें नाते,
मरें घरी-भर रोने।
कितनी बेर प्रान छोड़ दये,
की के सगे कौने।
ईसुर हाथ लगै ना हँडिया,
आबै सीत टटौंने।

15

जय धरती के लाल…

धरती के लाल—किसान की कथा हम युगो से सुनते आ रहे हैं। इसके त्याग, श्रमदान, दरिद्रता, असमर्थता आदि की ओर सबने किसी न किसी रूप में ध्यान दिया, लेकिन उसकी दशा कुछ सुधरी और बिगड़ी अधिक। अपने दुर्भाग्य से जितना यह बेचारा लड़ा, उतना कोई नहीं। इसने सोना उत्पन्न किया, लेकिन अपने लिए नही। यह स्वयं मरा, कई बार मरा, बार-बार मरा, लेकिन दूसरों को जीवित रखने के लिए। इसने तालाब खोदे, नदियो के बहाव को मोड़ा और पत्थरों को जलमय बनाया, केवल दूसरो की प्यास बुझाने के लिए। इस पृथ्वी-पुत्र की गाथा एक सत की कथा है, एक परोपकारी की कहानी है। हमसे जितनी बार इस अमर-सुत का नाम लिया जाय, उतनी ही बार हम पुण्य के भागी बनते है। एक कण का दाता हमारा पालक कहलाता है। किसान तो हमारे परिवार का जन्म-जन्म से पालन कर रहा है, उसे हम अपना जीवन-दाता अथवा रक्षक कहें तो अत्युक्ति न होगी। आज देश में अन्न-वृद्धि की पुकार है। ससार किसान की दया माँग रहा है। दुनिया कृषक के चरणों को चूमना चाहती है। राज्यपुरुष, नेतागण, कलाकार और विज्ञान-विशारद सब इस धरती के लाल के मुखापेक्षी हैं—

त्राहि त्राहि मची आज,
चीख रहे नेतागण,
कहते है राज्यपुरुष,
कहते हैं कलाकार,
वैज्ञानिक, विद्याधर,
सकट सन्मुख महान्,
दस प्रतिशत और बढा
अन्न की उपज, किसान!

दे सबको प्राणदान,
भूखों को अन्नदान।
और अधिक श्रम कर तू,
और अधिक मर-खप तू,
दश-प्रतिशत कमी मिटा,
उपज बढा, उपज बढ़ा!
गूंज रही बार - बार,
दश-प्रतिशत की पुकार।

—श्री जगन्नाथ प्रसाद मिलिन्द

जीवन में विश्वास रखने वाले धरती के लाल आज तेरा युग है। तेरी पुकार को अब कोई भी अनसुनी नही कर सकता। तेरे अविश्वासी हो जाने पर यह आसमान और धरा विश्वास छोड़ बैठेगी। राजसिंहासन आज तेरे आगे नत है। तेरी चिरन्तन साधना ने असम्भव को सम्भव कर दिखाया है। यह निश्चित है कि एक दिन भारत का राष्ट्रपति तू ही बनेगा। भारत का भाग्य-निर्माण तेरे हाथ मे होगा और तेरे हल की नोक हमारे दुर्भाग्य की रेखाओं को मिटाएगी।

यहाँ मै कुछ कवियो की कविताओ की उन पक्तियों को उद्धत कर रहा हूँ जिनमे किसान के जीवन-चित्र अकित हुए है। निश्चयतः सरस्वती के ये सुपुत्र धन्य है जिन्होने किसान को अपनी लेखनी से चित्रित किया और गहरी अनुभूतियों के साथ उसके सुख-दुख को अपनाया! धूल-धूसरित यह कृषक हमारा आराध्य है, यह हमारे उज्ज्वल भविष्य का प्रतीक है। हमने इसकी गरिमा को पहचाना लेकिन बहुत ही देर के बाद। आज तो कलाकार की तूलिका इस नगे की देह को रंगों से सजा रही है। पाषाणों से निर्मित इस हलधर की प्रतिमा आज हमारे लिए वन्दनीय है। यह तपस्वी किसान साक्षात् शकर है। पृथ्वी के त्याज्य विष को स्वय पीकर धरती के इसी लाल ने असंख्य प्राणों को बचाया है।

जय धरती के लाल—

× ×

कृषी निरावहिं चतुर किसाना, जिमि बुध तजहिं मोह मद माना।

—रामचरितमानस (किष्किन्धाकांड)
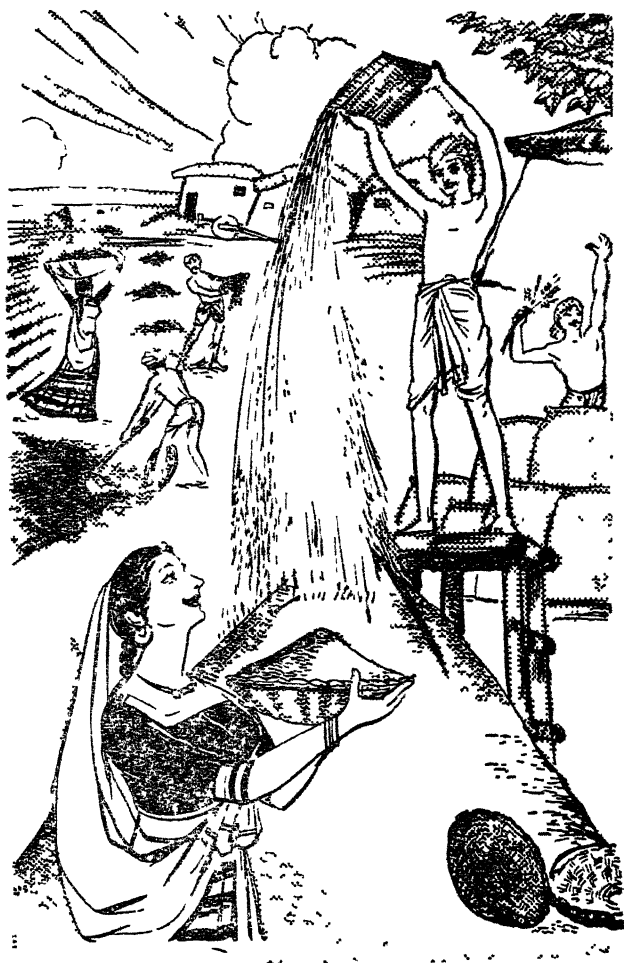
किसवी, किसान-कुल, बनिक भिखारी भाट,
चाकर, चपल नट चोर चार चेट की।
पेट को पढत, गुन गढ़त, चढत गिरि,
अटत गहन-वन अहन आखेट की···

—कवितावली—गोस्वामी तुलसीदास

खेती न किसान को, भिखारी को न भीख, बलि
बनिक को बनिज न चाकर को चाकरी।
जीविका-विहीन लोग सीद्यमान सोचवस,
कहै एक एकन सों कहाँ जाई, का करी।

—कवितावली—गोस्वामी तुलसीदास

बुध किसान सर वेद निज, मत्ते खेत सब सीच।
तुलसी कृषि लखि जानिबो, उत्तम मध्यम नीच॥
पाही खेती लगन बट, रिन कुब्याज मग खेत।
बैर बड़े सों आपने, किए पाँच दुख हेत॥
माली भानु किसान सम, नीति निपुन नरपाल।
प्रजा भाग बस होहिंगे, कबहुँ कबहुँ कलिकाल॥

—दोहावली—गोस्वामी तुलसीदास

जिनके कारण सब सुख पावें, जिनका बाया सब जन खायँ।
हाय-हाय उनके बालक नित, भूखों के मारे चिल्लायँ।
काल सर्प की-सी फुफकारें, लुएँ भयानक चलती है।
धरती सातों परतें जिसमें लावा-सी जलती है।
तभी खुले मैदानों मे वे कठिन किसानी करते है।
नगे तन बालक नर-नारी, पित्ता पानी करते है।
अहा विचारे दुख के मारे, निसि-दिन पचपच मरें किसान।
जब अनाज उत्पन्न होय तब, सब उठवा ले जायँ लगान।

—बालमुकुन्द गुप्त

बीज राख फल भोग वै, ज्यों किसान जग माँहि।
त्यों चक्री नृप सुख करै, धर्म बिसारै नाहि।

—अज्ञात

दीन कृषक जन औरहु दया योग दरसावही।
जिनके तन पर स्वच्छ वस्त्र कहुँ लखियत नाही।
मिहनत करत अधिक पर अन्न बहुत कम पावत।
जे निज भुजबल हल चलाय के जगत जियावत।

—प्रेमघन

पूछी थी सुकाल-दशा मैंने आज देवर से—
कैसी हुई उपज कपास-ईख-धान की?
बोले—"इस बार देवि, देखने मे भूमि पर,
दुगुनी दया-सी हुई इन्द्र भगवान की।"
पूछी यही मैंने एक ग्राम मे तो कर्षको ने,
अन्न, गुड, गोरस की वृद्धि ही बखान की।
किन्तु 'स्वाद कैसा है, न जाने, इस वर्ष हाय!
यह कह रोई एक अबला किसान की।

—साकेत—राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त

कतहुँ फावरे धरे कृषक कोउ मेंड बनावत,
कहुँ श्रम सों अति थके कृषक निज चिलम चढावत।
कोउ विशेष जल देखि खेत खनि नीर निकारत,
कीच सने तनु कतहुँ नीर सों कृषक पखारत।
काँधे काँवर लिए घास को कोउ गृह आवत,
कोउ काटत कहुँ घास गीत प्रमुदित चित गावत।···

—'वर्षाऋतु में ग्राम्य-दृश्य'—श्री लोचनप्रसाद पांडेय

बोय सीसु सीच्यौ सदा हृदय-रक्त रण-खेत।
बीर कृषक कीरति लही करी मही जस-सेत।

—वीर सतसई—वियोगी हरि

अनावृष्टि-अतिवृष्टि-कोप से,
बचा, अन्न-कण प्यारे,
युग-युग से देता आया हूँ
स्वार्थी जग को सारे।

अन्न कणो के बाद रक्त भी,
बूँद - बूँद दे डाला !
मैं कंकाल ! जल रही
जीवन मे अभाव की ज्वाला !
मेरी सेवा के आश्वासन को
व्यवसाय बनाकर।
सत्तारूढ हुए कितने,
मुझसे मत पा, सत्वर।...

—किसान की चुनौती—श्री जगन्नाथ प्रसाद मिलिन्द

इन खलिहानों मे गूँज रही किन अपमानों की लाचारी !
हिलती हड्डी के ढाँचो ने पिटती देखी घर की नारी।
जब लोट-लोट-सी पड़ती है, ये गेहूँ धानों की बाले।
है याद इन्हे आती जब खिचती थी तेरी खाले।
युग-युग के अत्याचारो की आकृतियाँ जीवन के तल में।
घिर-घिर कर पुजीभूत हुई ज्यों रजनी की छाया छल में।

—श्री रामेश्वर शुक्ल 'अंचल'

हमारे हाथ में हल है।
हमारे हाथ में बल है।
कि हम बजर को तोड़ेगे।
बिना तोड़े न छोड़ेगे।
कड़ी धरती इधर भी है,
कड़ी धरती उधर भी है।
कि हम उसको बिदारेगे,
न चूकेंगे—न चूकेगे।...

—श्री केदारनाथ अग्रवाल

आँखों के पानी से धरती सींच-सीचकर जीनेवाले।
आज भोर की नयी किरण से तू अपना शृंगार करा ले !

....

अपनी ताकत के बल पर तू।
मिट्टी से सोना उपजाता।
अपने विश्वासो को लेकर
पाषाणों में प्यार जगाता।
अपनी मुस्कानों से काँटों पर आशा के फूल खिला ले।

—'किसान' श्री ज्योतिप्रकाश सक्सेना

देश वही खुशहाल, जहाँ का हर किसान खुशहाल हो।
हरे-भरे हो खेत जहाँ के, हरी-भरी चौपाल हो।

—श्री राजेश्वर गुरु

किसने काया-पलट भूमि की कर दी?
सुनकर प्रश्न हमारा।
आगे बढ़ा कृषक, यों बोला, "मेरे श्रम ने, मेरे श्रम ने।"

—प्रो० रामेश्वर दयाल दुबे

16

घर की लछमी गाय हमारी

भारत की सच्ची निधि गाय है। यह हमारी माता है। इसकी पूजा करके यहाँ के निवासी अपने-आपको भाग्यशाली मानते हैं। भारतवर्ष कृषिप्रधान देश है, इसलिए यहाँ गाय की विशेष मान्यता है। इसके बछड़े ही बैल बनकर खेती के साधन होते है। इनके बिना खेती हो ही नही सकती। बिना बैलो के खेती करने की दम भरने वाला किसान चौदह पुश्तों का झूठा है—

बिन बैलन खेती करै, बिन भैयन के रार।
बिन मेहरारु घर करै, चौदह साख लबार॥

गाय का दूध अमृत कहा जाता है। इसे पीकर मनुष्य पुष्ट होता है और लम्बी आयु पाता है। गाय का दर्शन शुभ माना जाता है। प्रातःकाल गौ के चरणों को छूने वाला हिन्दू स्वर्गलोक को पाता है। धार्मिक दृष्टि से गाय की बड़ी महिमा है। हमारे शास्त्रों मे कहा गया है—

माता रुद्राणां दुहिता, वसूनां स्वसाऽऽदित्यानाममृतस्य नाभिः
प्रनु वोचं चिकितुषे जनाय मा गामनागामदितं वधिष्ट।

गाय रुद्रों की माता, वसुओं की पुत्री, अदिति पुत्रो की बहन और घृतरूप अमृत का खजाना है। प्रत्येक विचारशील मनुष्य को यही समझाकर कहा है कि निरपराध एव अबध्य गौ का वध न करो। —अथर्ववेद

गाय के समस्त शरीर में देवताओं का निवास है। इसीलिए सर्व देव स्वरूप गाय की सेवा करने से नारायण प्रसन्न होते हैं—

यस्या शिरसि ब्रह्मास्ते स्कंधदेशे शिवः स्थितिः।
पृष्ठे विष्णुस्तथा तस्थौ श्रुतयश्चरणेषु च।

या अन्या देवताः काश्चित्तस्या लोमसु संस्थिताः।
सर्वं देवमयी गौस्तु तुस्येत्तद्भक्तितोहरिः।

—बृहत्पाराशर

—गौ के सिर मे ब्रह्मा, कन्धे मे शिव, पीठ मे विष्णु, चारों चरणो में चारों वेद और अन्य सम्पूर्ण देवता समस्त रोमो मे वास करते हैं। अतः गौ सर्वदेव-स्वरूप है। गौ के सेवन से नारायण संतुष्ट होते है।

पापो का विनाश करनेवाली और जाति-भेद को भूलकर सबको समान भाव से मीठा दूध पिलानेवाली गाय पशुओ मे श्रेष्ठ है। सम्राट् अकबर के हृदय मे गौ के प्रति श्रद्धा थी। उसने अपने राज्य मे गौहत्या बन्द कराई थी। कहा जाता है कि एक दिन कसाई के हाथ से छूटकर एक गाय चिल्लाते हुए अकबर के सामने खड़ी हो गई। पास मे महाकवि नरहरि भी खड़े थे। सम्राट् के पूछने पर श्री नरहरि ने बताया कि गाय अपनी रक्षा के लिए प्रार्थना कर रही है। महाकवि ने निम्नस्थ छप्पय पढ़ा, जिसे सुनकर सहृदय शासक अकबर विशेष प्रभावित हुआ—

'अरिहि दंत तिनु धरै, ताहि नहिं मारि सकत कोइ।
हम संतत तिनु चरहि बचन उच्चरहिं दीन होइ।
अमरित पयनित स्रवहिं बच्छ महि थमन जावहिं।
हिन्दुहि मधुर न देहि कटुक तुरकहिं न पियावहिं।
कह कवि नरहरि अकबर सुनौ, बिनवति गउ जोरे करन।
अपराध कौन मोहि मारियत, मुएहु चाम सेवइ चरन।

इतिहास इस बात का साक्षी है कि अकबर के राज्य मे गौवध की मनाही थी। निम्नस्थ छन्द से तो प्रकट है कि गौहत्या करने वाले को प्राणदण्ड दिया जाता था—

नरहरि कवि सो गऊ की विनती सुनि,
साँची गुन खलन पै कै मति ऊकस सी।
अकबर जारी परवाने किये मारिवे को,
चारिहुँ महीपन लखानी बात हक सी।
व्यापि गयो हुकुम दिल्लीपति को हिंदभरि,
बाजिवी विचारि मन अति कै करकसी।

जीवन कसाइन कौ गाइन को देत भयो,
गाइन कौ मौत ले कसाइन को बकसी।
(अकबर दरबार के हिन्दी कवि)

गाय का मूत्र अनेक रोगों का विनाशक है। इसके गोबर की खाद खेत में पडकर सोना उत्पन्न करती है। गोबर की खाद देने से खेती मे अत्यधिक वृद्धि होती है। गाय का दूध, घी, मठा, मक्खन आदि अमृत की भाँति शक्ति बढाने वाले है। किसान अपने दरवाज़े पर खडी हुई गाय को देखकर फूला नहीं समाता। लोककवि घाघ के शब्दों में दूध देने वाली गाय कृषक के लिए महान् सम्पत्ति है। स्वर्ग में जो सुख मिलता है वह आनन्द दुधारी गाय को पाकर किसान अपने कच्चे घर में पा लेता है—

भुइयाँ खेंडे हर ह्वै चार, घर होय गिहथिन गऊ दुधार।
अरहर क दालि जडहन क भात, गागल निबुआ औ घिउ तात।
सइ रस खड दही जो होय, बाँके नैन परोसै जोय।
कहै घाघ तब सब ही झूठा उहाँ छाँड़ि इहवै बैकुण्ठा॥

प्राचीन काल में हमारे देश में दूध की नदियाँ बहती थी। हमारे भारत के निवासी गाय का दूध पीकर ही ऐसे बलवान थे कि देवता तथा दैत्य इनके सामने झुकते थे। यह निश्चित है कि गाय का विनाश हमारे नाश का कारण होगा। गौवश को मिटाकर हम लोग कभी भी सुखी नही रह सकते। भगवान् कृष्ण ने गायों की सेवा करके हमारे सामने एक महान् आदर्श रखा है। हिन्दुओं को चाहिए कि वे भगवान् कृष्ण के सच्चे सेवक तभी कहला सकते है जब वे गौसेवा से अपने शरीर और मन को पवित्र करे। हमारे पुराणों में ऐसी अनेक कथाएँ है जिनसे सिद्ध होता है कि भारतीय नरेशों ने गायों की सेवा करके अपनी प्रजा को सुखी बनाया था और राज्य की वृद्धि करके गौसेवा की महिमा को सबके लिए धर्ममंत्र बताया था। हमारे धर्मग्रन्थो का कहना है कि गो सेवा से पुण्य-लाभ और लक्ष्मी की प्राप्ति निश्चित रूप से होती है—

गवां सेवा तु कर्त्तव्या गृहस्थैः पुण्यलिप्सुभिः।
गवां सेवा परो यस्तु तस्य श्रीर्वर्धतेऽचिरात्।

—पुण्य स्वकल्याण चाहने वाले गृहस्थों को गौ-सेवा करनी चाहिए, क्योंकि गौ-सेवा में लगे हुए पुरुष को शीघ्र ही सम्पत्ति-वृद्धि होती है। गौ सेवा से धन-सम्पत्ति,

आरोग्यादि मनुष्य-जीवन को सुखकर बनानेवाले सम्पूर्ण साधन सहज ही प्राप्त हो जाते है।

—'कल्याण' (गौ अंक, पृ० 148)

आज हमारे युवक निर्बल क्यो है ? जवानी मे ही ये वृद्ध-से क्य लगते है ? हमारी खेती दिन पर दिन क्यों कमज़ोर हो रही है ? हम आज क्यों गरीब है ? हमारे देश मे आज क्यो रोग फैल रहे है ? हम आज क्यों अरक्षित है ? इन सब प्रश्नों का एक उत्तर यही है कि गायो की सेवा और रक्षा न करना। एक बार (फरवरी, 1942 मे) पूज्य बापू ने कहा था—

"आज गाय विनाश के कगार पर खडी है और मै विश्वासपूर्वक यह कह नहीं सकता कि आखिर हमारी कोशिशे कामयाब ही होगी लेकिन अगर गाय न रही, हम भी न रह पाएँगे। हम, यानी हमारी सस्कृति—हमारी स्वभाव सिद्ध अहिंसक और ग्रामीण सस्कृति। इसलिए आज हमे चुनाव कर लेना है अगर हम चाहे तो हिंसक बन सकते है और जो ढोर आर्थिक दृष्टि से लाभ पहुँचाने वाले न हो उन सबको मौत के घाट उतार सकते है, फिर तो हमें यूरोप की तरह ढोरों का पालन दूध और मांस के लिए ही करना होगा लेकिन हमारी सस्कृति का कलश तो किसी दूसरी नीव पर रखा गया है, हमारा जीवन हमारे पशुओ के साथ ओत-प्रोत हो गया है, हमारे अधिकाश देहाती अपने मवेशियो के साथ अक्सर एक ही छप्पर के नीचे रहते हैं। दोनो साथ रहते है और साथ ही भूख के कष्ट सहते है। अक्सर मालिक बेचारे ढोरो को भूखो मारता है उनकी बेबसी से अनुचित फ़ायदा उठाता है, उन पर जुल्म ढाता है और उनसे बेदर्द होकर काम लेता है, लेकिन अगर हम अपना रग-ढंग सुधारे तो अपने साथ हम अपने ढोरो का भी उद्धार कर सकते हैं, वरना हम दोनो साथ मे डूबेगे और यही अच्छा भी है कि हम एक साथ तरें या एक साथ मरे। आज हमारे सामने सबसे बडा सवाल अपनी गरीबी और फ़ाका-कशी को मिटाने का है। लेकिन मैंने तो आपके सामने ढोरो की भूख और उनकी गरीबी की बात की है। हमारे ऋषियो ने हमे इसका सबसे अच्छा उपाय सुझाया है। वे कह गए है, 'गाय की रक्षा करोगे तो तुम सबकी रक्षा कर सकोगे,' ऋषियों की दी गई इस पूँजी को हमें बढाना है, व्यर्थ ही इसे नष्ट नही कर डालना है।"

गाय हमारी पावन संस्कृति का प्रतीक है। भोलेपन की यह मनोहर मूर्ति है। अनाथों की यह माता है। भारतीयों की देवी है। ऐसी पवित्र और उपयोगी गाय को कष्ट पहुँचाना महापाप है। "जो उच्छृखलतावश मास बेचने के लिए गौ की हिंसा करते या गौ मास खाते है तथा जो स्वार्थवश कसाई को गाय मारने की

सलाह देते हैं, वे सब महान् पाप के भागी होते हैं। गौ को मारने वाले, उसका मांस खाने वाले तथा उसकी हत्या का अनुमोदन करने वाले पुरुष, गौ के शरीर में जितने रोएँ होते है, उतने वर्षों तक नरक मे पड़े रहते है।

गाय हमारे दुग्ध-भवन की देवी है। वह भूखो को खिलाती है नंगो को पहनाती है और बीमारों को अच्छा करती है। उसकी ज्योति चिरंतन है'।

—सम्पादक, 'होर्डस डेरी मैन', अमेरिका

सर्वेषामेव भूताना गाव. शरणमुत्तमम् ।

ससार के सब प्राणियों को शरण देने वाली गाएँ हैं।

हिन्दुस्तान किसानों का देश है। खेती का शोध भी हिन्दुस्तान मे ही हुआ है। गाय-बैलो की अच्छी हिफाजत पर हिन्दुस्तान की खेती निर्भर है। हिन्दुस्तानी सभ्यता का नाम ही गौ सेवा है। लेकिन आज गाय की हालत हिन्दुस्तान में उन देशों से कही अधिक खराब है, जिन्होने गौ-सेवा का नाम नही लिया था। हमने नाम तो लिया, पर काम नही किया। जो हुआ, सो हुआ, लेकिन अब तो चेते।

—श्री विनोबा भावे

वशां देवा उपजीवन्ति, दशा मनुष्या उत।
वशेदं सर्वसमवत् यावत्सूर्यो विपश्यति ॥

—अथर्ववेद

जहाँ तक सूर्य का प्रकाश पहुँचता है, गाएँ सबको समान रूप से लाभ पहुँचाती हैं। देव, मनुष्य, राक्षस-सभी गौ-दुग्ध से लाभ उठाते हैं।

—वैदिक साहित्य, पृष्ठ 357

17

सरस लोक-गीत

(बुन्देलखंडी)

(1)

रसिया आए, गरद उड़ी गोरी,

जब मोरे रसिया मेंड़े पै आए,
सूखी दूब हरियानी रे गोरी। रसिया आए.........

जब मोरे रसिया कुमला में आए,
रीते कुआँ भर आए री गोरी। रसिया आए............

जब मोरे रसिया द्वारे पै आए,
मुतियन चौक पुराए गौरी। रसिया आए............

जब मोरे रसिया बावरी में आए,
सोने कलस धराए गोरी। रसिया आए............

(2)

गाडी वारे मसक दै बैल,
अबै पुरबइया के बादर ऊन आए।

कौना बदरिया ऊनई रसिया,
कौना बरस गे मेय,
अवै पुरवइया के बादर ऊन आए।

अग्गम बदरिया ऊनई रसिया,
पच्छम बरस गे मेय,
अबै पुरबइया के बादर ऊन आए।

घुंघटा बदरिया ऊनई रसिया,
गलुअन बरस बरस गे मेय,
अबै पुरबइया के बादर ऊन आए।

(3)

सखी री मै तो भई न ब्रज की मोर,
कॉहॉ रहती कॉहॉं चुनती काना करती किलोल।
बन मे रहती बनफल खाती, बनई मे करती किलोल।
उड-उड पख गिरे धरनी मे, बीने जुगल किसोर।
मोर पख कौ मुकुट बनाग्रौ, बॉदे नन्दकिसोर।
सखी री मैं तो भई न ब्रज की मोर।

(4)

चैत चितै चहुँ ओर, चितै मैं हारी।
बैसाख न लागी आँख, बिना गिरधारी।
जेठ जलै अति पवन, अगन अधिकारी।
असाढ मे बोली मोर, सोर भयो भारी।
साउन में बरसै मेड़ जिसी हरियारी।
भँदवा की रात डर लगै, झिकी अँधियारी।
क्वाँर में करे करार, अधिक गिरधारी।
कातिक मे आए न स्याम, सोच भए भारी।
अँगना में भओ अँदेस, मोय दुख भारी।
पूषा में परत तुषार, भीज गई सारी।
माघ मिले नदलाल, देख छवि हारी।
फागुन में पूरन काम भए सुख भारी।

सैरे

अरे हाँ रे—कारी बदरिया तेरी पइयाँ परौ,
कौंदा बीरन के बल जॉय।
आज बरस जा मेरे देस में,
मेरे कंत घरै रह जाँय

× × ×

अरे हाँ रे—जुनरी बाजरा पिया मोरे
जिन बइयो।
को रखवरिया जाय।

हम दुर जइहैं अपने माय के,
तेरी सुआ बाल ले जायँ।

अरे हाँ रे—सास मोय लै दीजे बजन घुघरिया,
लैदे अँगिया मोय।
चुलिया लैदे रतन जडाव की,
जामैं लिखै पपइरा मोर।

अरे हाँ रे—तेल की फरिया मोरी फाटी ना,
ना छूटे हरद के दाग।
पाइन मैंदी मोरी छूटी ना,
कथा मरन चले परदेस।

फाग

(1)

करके नेह टोर जिन दैयो,
दिन दिन और बढैयो।
जैसे मिले दूध मे पानी।
असै मने मिलैयो।
हमरो और तुमारो जौ जिऊ,
एकई जाने रैयो।
कहत 'ईसुरी' बाँह गहे की,
खबर भूल जिन जैयो।

(2)

चलती बेर नज़र भर हेरो,
दिल भर जावे मेरो।
मिला लेव आँखन सो आँखें,
घूंघट तनक उगेरो।
टप-टप अँसुआ गिरत नैन सें,
चितै चितै मुख तेरो।
'ईसुर' कात बिदा की बेरा,
होत विधाता डेरो।

होरी

चाहै कछू हो जाय।
उमरि भरि मोरी, निभाइ देउ, बालमा।

(1)

नई गोरी नए बालमा, नई होरी की झाँक।
ऐसी होरी दागियो, तोरे कुले न आवै दाग।
समरिकै यारी करौ, मोरे बालमा।

(2)

यारी करी दिल जान के, दै परमेसुर बीच।
इतनी जामै खोटी करी, छोड गए अधबीच।
छैल के तोरे भले होने ना।

(3)

चुनरी रँगी रँगरेज ने,
गगरी गड़त कुमार।
बिंदिया गड़ी सुनार ने,
सो दमकत माँझ लिलार।
बिंदुलिया तो लैदई रसीले छैल ने।

रावला

लाज मोरी राखौ, सारदा मैया!
कौन तोरे मइया मठ बँधवाए?
कौन धरा दई कलैया?
लाज मोरी राखौ, सारदा मैया!
राजा तोरे मठ बँधवाए।
रनिया धराई कलैया।
लाज मोरी राखौ, सारदा मैया!

18

ऊँची-ऊँची बखरी उठाओ, मोरे बाबुल !

लोक-गीतो मे गृह-निर्माण-कला विषयक पर्याप्त सामग्री उपलब्ध है, जिस के अध्ययन से यह स्पष्ट है कि हमारे ग्राम-निवासियो को गृह-निर्माण-कला का सूक्ष्म अध्ययन था। इस प्रदेश मे राजाओ का राज्य चिरकाल तक रहा है, अत: उनके ससर्ग मे आने के कारण गाँवो मे रहनेवालो की दृष्टि विस्तृत हुई और उन्होंने अपने गीतो मे महल, किला, कचहरी आदि का सुन्दर वर्णन करके स्थापत्य कला के प्रति अपनी अभिरुचि प्रकट की है। यहाँ गीतो की कुछ पक्तियाँ दी जा रही हैं जिनका सम्बन्ध गृह-निर्माण कला से है।

एक पुत्री अपने पिता से प्रार्थना करती है—

"ऊँची-ऊँची बखरी[1] उठाओ मोरे बाबुल,
ऊँच-ऊँच राखो मुहार[2]।
सुरिज चाँद दोनों किरनी जो लागें,
निहुरै न कत हमार।"

× × ×

"सास मोरी सोवे अटरिया[3], ननद चटसारी[4] में हो,
लाला सैयाँ सोवे रगमहल मे, खबर मोरी को करै ?

× × ×

काना के बड़े कोटिया, जिनने कोट उठाये ?

× × ×

चदन की झझ ओवरी[5], मोतन जडी है किवारी[6]।

× × ×

चले आना मोरी बाखर हवेली[7] है रे।

× × ×

पहली छींक मोरे अंगना[8] मे भई है।
दूजी मड़ के द्वार[9] मोरे लाल।"

---

1. मकान, 2. दरवाजा, 3. अटारी, 4. कोठरी, 5. खिडकी, 6. छोटे किवाड़, 7. पक्का ऊँचा मकान, 8. आँगन, 9. मडा, दालान।

ककर चुन-चुन महल बनाए,
पत्थर फोर दिवाला रे,
चार खूंट पै दियला जारे,
बिन दीपक उजयारा रे।

× × ×

ई मे करत मुसाफिर डेरा, बना बगला मेरा।

× × ×

डेरा दओ खास दालानन[3], अपने हाथन झारो।

× × ×

डेरी तरफ मड़ा के भीतर, पलका बिछत हमारौ।

× × ×

आर के पार बना लओ चहिये, इक हलकौ सौ आरो[1]।

× × ×

इतनी सुन राजा दसरथ अटरिया मे चढ गए,
महलिया में चढ़ गए हो।

× × ×

राजा जड़ लये झझन किवाड़, चदरिया ओढ़े
सो गए महाराज।

× × ×

कंचन कलसा धराओ मोरी सजनी

× × ×

कै इक पग धरो रे देहरिया[2], कि दूजो धरो है
कुठरिया[3] के मसकई आय गए हो।।"

× × ×

सोवत ती मैं रंगमहल मे दुलरी कौनन चुराई मोरे लाल।

× × ×

चढकें अटा घटा ना देखें, पटा देव अँगनाई[4]।
बारादरी[5] दौरियन में हो, पवन न जावे पाई।

× × ×

बरोठिया धराओ सिकिया के बोझवा,
बरीठवा[6] बैठाओ बिरन भइया।"

× × ×

---

1. आला 2. देहरी, 3. कोठरी, 4. आँगन, 5. बारह दरवाजों की इमारत,
6 दरवाजे की बैठक।

सुदर बनौ दुर्ग दरवाजौ, डका जहाँ विजय को बाजौ।

× × ×

जाके आस-पास है कोट।

गुरजन की है ऊँची ओट

बैरिन की न व्यापै चोट।...

× × ×

बहनी गई मुकरवा[1] तीर,

मोसे धरत बने ना धीर।

× × ×

अरे अरे प्रेम चिरइया, झरोखवन बोलै हो।

× × ×

सिर साहेब सोवै गजओवर[2], जगाए नहिं जागई हो।

सासु त सोवती अटरिया, ननद पटसरिया[3] हो।

× × ×

अँगने मा बइठे हँइ गोतिया,

ओसरवा[4] में गोतिनी हो।

सुनी पड़ी दहलान त रमइया बिना हो।

चारिउँ खूंट कै गजओवरि, तौ चारिउँ खूंट दिया बरइ हो।

× × ×

साससोये बरोठिया[5], ननद सोये कोठरिया,

जगाए नाहि जागई हो।

× × ×

काहू का गिरा है अगरा-पगरा[6]

काहू का गिरा कुठार।

मोरे पिया का मुड़हर[7] गिरिगा,

रोवै धरै कपार!

× × ×

---

1. मृत मनुष्य की यादगार में बनी हुई इमारत, 2. मकान का एक भाग, 3. मकान के भीतर कोठा, 4. उसारी या दालान 5. दरवाजे के भीतर की बैठक, 6. मकान की दीवार, 7. मुंडेरी।

तीसहू कोठरिया कै बत्तीस हूँ दुआर से,
कि तीसहू सेजरिया[1] से आई हइ,
मारीचिया कइ भार हो।

× × ×

बनाओ राजा बगला नदिया के तीर।
खिरकी रखियो चारो ओर।
राजा, सोऊँ सुख की नीद।

× × ×

एक फूल फूलै मदिर ऊपर।
दिल बसिगा चिरइया तोरेन ऊपर।

× × ×

बखरी भली बनवायो ठाकुर,
कलसा लगे अकास।
कलसा झाँकत पागा गिरिगा,
बखरी जात डेर लाग।

× × ×

बारा दुबारी का है बँगला, चौसठ खंभा लाग।
जागत पहरुआ सोय गए, माता दुलरी लैइगे चार।

× × ×

बड़े अटारी बड़े ढबा[1] नारे सुअटा,
बड़े तुमारे नाम।

× × ×

उसारे[2] में पौड़ जाओ अरे परदेसी।

× × ×

इस फाग में शरीर की तुलना एक बखरी से की गई है—

बखरी बसियत है भारे की, दई पिया प्यारे की।
कच्ची ईट बनी माटी की, छई फूस चारे की।
जीमें नहीं किवार किवरिया, बे-साँकर-तारे की।
वे बदेज डरी बेवाड़ा, ऊसई दस द्वारे की।
'ईसुर' कहत करालेव खाली, हमें नहीं वारे की।

---

1. छत, 2. दालान।

जरदी छाई लतन लतन पैं, लख वन बाग छतन पैं।
हेलन सजे हवेलिन ऊपर, अबर कई वतन पैं।···

नेपाल के पशुपतिनाथ के मन्दिर को सोने से अलकृत करने के लिए आतुर एक भक्त की भावना पर विचार कीजिए। वह पूरे नेपाल को चाँदी से चमकीला बनाना चाहता है। भारत की वसुन्धरा के ईश्वर-भक्त सदैव से उदार रहे हैं—

"आरे धन्य नगर नयपाल हो लाला,
धन्य नगर जयपाल हो।
आरे जाहावाँ विराजे पसुपति बावा,
धन्य नगर नयपाल।
आहो कथिये[1] छवइयो मै बाबा के मदिलबा,
आहो लाला कथिये छबइयो नयपाल हो।
सोनवे छबइयो मे बाबा के मदिलवा,
रूपवे[2] छबइयो नयपाल हो।

एक पंजाबी बहन अपने पति की बनाई हुई ऊँची अटारी की प्रशंसा करती हुई भाई को अटारी पर चलने के लिए आग्रह करती है—

आयो वे वीरा चढ़ीए उच्च माडी
मेरे कान्ह उसारी।
—'पंजाबी बहन गाती है' —श्री देवेन्द्र सत्यार्थी

आधुनिक स्थापत्य कला-विशारदो को लोक-गीतो से गृह-निर्माण विषयक बहुत कुछ सामग्री प्राप्त हो सकती है।

1. किस वस्तु से, 2. चाँदी।

19

चरखा संग रमाई धूनी

(लोक-गीतों में चरखा)

चरखा हमारे जीवन का साथी है। यह आजीविका का अमर साधन है और दीन-हीन की रोटी है। गाँवो मे अवकाश मिलने पर हमारी बहू-बेटियाँ और माताएँ इसके द्वारा मनोविनोद करती है और सूत कातकर कपडे की कमी को पूरा करती रहती है। चरखे की अलौकिक शक्ति का परिचय तो हमे अब मिला है। पूज्य बापू ने इसे सुदर्शन चक्र के रूप मे सम्मानित करके ससार को दिखा दिया है कि भारतीय साधना का अविनश्वर प्रतीक यह चरखा अहिंसा का प्रबल पोषक है। गरजती हुई तोपो का सामना यह काष्ठनिर्मित चरखा सबल बनकर कर सकता है—इस रहस्य का उद्‌घाटन आधुनिक काल मे महात्मा गाधी ने ही किया है। यों तो प्राचीन काल मे हमारे ऋषियो ने इसकी महत्ता का पूर्ण अनुभव कर ही लिया था। अपने हाथ से काते हुए सूत का ही जनेऊ पूर्वकाल मे शुद्ध माना जाता था।

कविवर भूधरदास ने जीर्ण-शीर्ण शरीर को पुराने चरखे के रूप मे चित्रित करते हुए लिखा है—

'चरखा चलता नाही रे, चरखा हुआ पुराना।
पग-खूँटे दो हालन लागे, उर-मदिरा खखराना।
छिदी हुई पाँखडी पाँसू, फिरै नही मन माना। चरखा···
रसना-तकली ने बल खाया, सो अब कैसे खूटै।
शब्द-सूत सुधा नहिं निकसै, घड़ी-घड़ी पल टूटै। चरखा···
आयु माल का नहीं भरोसा, अंत चला चल सारे।
रोज़ इलाज-मरम्मत चाहै, बैद-बाढ़ई हारे। चरखा···

नया चरखला रंगा-चंगा, सबका चित्त चुरावै।
पलटा वरन, गए गुन अगले, अब देखें नहिं भावे। चरखा···
मोटा मही कातकर भाई, कर अपना सुरझेरा।
अंत आग में ईंधन होगा, भूधर समझ सवेरा। चरखा···

इस बुन्देली गीत मे पूज्य बापू और माता कस्तूरबा की स्तुति में चरखे का उल्लेख विशेष रूप से किया गया है ।

'गाधी एक महात्मा उपजे, कलयुग में अवतारी रे।
तिनकी तिरिया पतिव्रता भई,
कस्तूरी बा जानी रे।
चरखा सग रमाई धूनी,
दोइ मानस उपकारी रे।
साँची बात धरम की जानी,
और अहिंसा ठानी रे।
मरद लुगाई लड़ी लड़ाई, सत्याग्रह सो जानी रे।
अँगरेजन सों जवर जोर भओ,
हार उनई ने मानी रे।
गांधी एक महात्मा उपजे, कलयुग मे अवतारी रे।'

चरखे की उपयोगिता निम्नस्थ गीत में कितने सुन्दर रूप से बताई गई है—

'भैया ! चरखा कातो रे,
चरखा सबको पेट भरैया।
चरखा सबको भैया
चरखा से ही देह ढकत है।
चरखा दाम रुपैया।
भैया चरखा कातो रे।'

महात्मा गांधी को दूल्हा बनाकर इस गीत में चरखा को गतिशील बनाने का प्रण किया गया है—

'मेरे चरखे का टूटे न तार, चरखे चालू रहे।
गांधी महात्मा दूल्हा बने है,
दुलहिन बनी सरकार। चरखा चालू रहे।
सारे कांग्रेसवा बने हैं बराती,
पुलिस बनी है कहार। चरखा चालू रहे।

नेहरू जवाहर बने नेंगारे,
नउग्रा बनो थानेदार। चरखा चल रहे।

हमारे गांधीजी के व्यक्तित्व में चरखा पूर्ण रूप से समा गया है। चरखे के भव्य स्वरूप को यदि गांधी कहा जाय तो अतिशयोक्ति न होगी। ग्राम-गीतों मे तो गांधीजी और चरखे का एकीकरण सुगमता से मिल जाता है। पूज्य बापू का उपदेश आज हमारे लिए धर्म का रूप है। गांधी के बचन निभाने के लिए दुलहिन को समझाया जा रहा है—

'बचन गांधी के निभाओ बारी बनरी।
के बारी बनरी चीज़े स्वदेसी पहनो,
विदेशी को वापिस कर दो बारी बनरी।
के बारी बनरी ए रग स्वदेशी पहनो
विदेसी को वापिस कराओ बारी बनरी।
कै मोटी (बारी) बनरी चरखा कातो।
खादी से नेह लगाओ बारी बनरी।

वेदों में चरखे का उल्लेख अनेक स्थलों पर हुआ है। प्राचीन काल मे ब्राह्मण अपने हाथों से काते हुए सूत का पावन यज्ञोपवीत धारण करते थे। पंजाब के लोकगीतों में चरखा की सुमधुर गति का चित्रण पर्याप्त मात्रा में हुआ है। ग्रामों में बहू-बेटियाँ आज भी चरखा चलाकर अपने अवकाश के क्षणों को व्यतीत करती रहती हैं। पुराने समय मे चरखा का उपयोग प्राय: प्रत्येक घर में होता था। नदी सा लम्बा तार निकालने वाली एक पजाबी कोमल युवती अपने चरखा की प्रशंसा करती हुई कहती है—

चरखा मेरा आठ-फागुडा माल मेरी नूं ताड़
पूणी ताँ बदाँ लसलसी, नन्द कड़ढ़ा दयडि।
आगे ताँ चरखा रँगला, पिच्छे पीढ़ा लाल।
चकले दे उधर चाकला, चकले दे उधर कत्थो
कत्तन वाली नाजो कोमली।

वीर-प्रसूता राजस्थान की धरणी पर जहाँ एक ओर शूरों की तलवारें चमकी और विजय के नगाड़े बजे, वही दूसरी ओर जीवन के अभिन्न साथी चरखे ने भी अपने सुरीले स्वर से स्वावलम्बन के गीत गाए।

"चरखो भँवरजी ले ल्यूँ रांगलो जी
हाँ जी ढोला पीढो लाल गुलाल
तकवो तो ले ल्यूँ वीजन्न सारो जी
ओ जी म्हारी जोड़ी राम भरतार।
पूँणी मँगाल्यूँ जी भँवर जी बीकानेर चीजी
मोहर-मोहर री कातुं भँवर जी कूकडी जी
हाँ जी ढोला रोक रुपैये को तार,
मै कातूँ थे बैठा विणज ल्योजी

—राजस्थानी लोक-गीत

इस प्रकार चरखा-गान से हमारे लोक-गीत पुनीत हुए है।

चरखे ने हमे पराधीनता से मुक्त किया है और इस प्राप्त स्वतन्त्रता का संरक्षण हमे इसी चरखे के बल पर करना चाहिए। वस्त्रो की आवश्यकता हमारे जीवन मे प्रमुख है, इसकी पूर्ति यदि हम स्वय कर सके तो क्या ही अच्छा हो। अब विदेशों से वस्त्र-भिक्षा माँगना ठीक नही है। चरखे का आश्रय लेकर हम वस्त्रों की कमी को पूरा कर सकते है। इसके सूत से बना हुआ कपडा पवित्रता की भावना को हृदय मे उत्पन्न करता है। खादी पहनते ही मानव-मन में राष्ट्र-प्रेम और उच्च विचार उमडने लगते है। खादी को मोल लेकर हम अपने गरीब भाइयो की सहायता करते है। इस प्रकार चरखा चलाना भारत के निवासियों के लिए आर्थिक दृष्टि से भी विशेष उपयोगी है।

20

जीमें लिखे पपीरा मोरें...

(लोक-चित्रकला)

चित्रकला भारतीय लोक-जीवन का एक अग रही है। हमारी देवियों का इस कला के द्वारा मनोविनोद होता था और कभी-कभी वे अपने मन के विचारों को चित्रों के माध्यम से प्रकट कर उल्लास का अनुभव करती थी। पुरुषो का भी अनुराग इस कला के प्रति था। ग्रामो मे आनन्द के अवसरों पर दीवारो पर अनेक देवी-देवताओ के चित्रो को आज भी हमारी माताएँ और बहने चित्रित करती है। धार्मिक उत्सवो का प्रारम्भ भगवान् के चित्रो से होता है। व्रतों को करने वाली स्त्रियाँ दीवार तथा कागज पर चित्रित देवताओ के चित्रों की पूजा करती है। हमारे देश में अनेक त्योहार मनाए जाते हैं। इनका सम्बन्ध देवी-देवताओ से है, अतः इन अवसरो पर भी देव-चित्रों को बनाया जाता है। साझी, चौक, गोदना, ऐपन, मेहन्दी-रचाने वस्त्रो की छपाई-रँगाई, थापो, सौभाग्य-बिन्दुओ, कसीदा आदि मे चित्रकला के सुन्दर उदाहरण हमे मिल सकते हैं। एक समय दर्जी चोलियो के बनाने मे बड़े निपुण होते थे। वे मोर, पपीहा, तोता, मैना आदि के चित्रों से इनको सजाते थे। रँगरेज तो विविध रंगों मे कपड़ो को रंगते थे और पशु-पक्षियों के चित्रों को रगो के द्वारा अकित करते थे। इस समय भी चित्रकला उत्तरोत्तर वृद्धि कर रही है। कुम्भकार मटकों पर चित्रकला के अनेक अगो को चित्रित करते है। राम-कृष्ण-जन्मोत्सवो पर तथा नाग पंचमी, लक्ष्मी-पूजन, दीपमालिका, विवाह आदि के अवसरो पर हमें लोक-चित्रकला के अनेक रूपों को देखने का मौक़ा मिलता है।

लोक-काव्य के अध्ययन से हमें पता चलता है कि प्राचीनाकल में कन्याएँ तथा युवतियाँ विशेष रूप से चित्रकला का अध्ययन करती थीं। संस्कृत एव हिन्दी साहित्य चित्रकला की गरिमा के सम्बन्ध मे अनेक प्रमाण उपस्थित करता है।

विष्णु धर्मोत्तर पुराण के चित्र सूत्र में कहा गया है कि "समस्त कलाओं में चित्र-कला श्रेष्ठ है। वह धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को देने वाली है। जिस गृह मे यह कला रहती है वह गृह मांगल्य होता है।" (तृतीय खड, 45-48) एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण बात यह कही गई है कि नृत्य और चित्र का बड़ा गहरा सम्बन्ध है। मार्कण्डेय मुनि ने कहा था कि नृत्य और चित्र दोनो ही त्रैलोक्य की अनुकृति रूप है। महानृत्य में दृष्टि, हाव-भाव आदि की जो भगी बताई गई है वह चित्रो में भी प्रयोज्य है, क्योकि वस्तुतः नृत्य ही परम चित्र है—'नृत्य चित्र परं स्मृतम्।'[1]

लोक-कवि ईसुरी अपनी प्रियतमा की अगिया का वर्णन करते हुए कहते है कि इसमें अनेक पक्षियो के चित्र चित्रित हुए है—

जीमें लिखे पपीरा मोरे,
ऐसी अँगियाँ तोरे।
मुकते लाल मुनैयाँ लिपटे,
चिरवा चारु चकोरे।
पीरी हरी चिरैयाँ चिपकी,
सुआ मुरक मुख मोरे।
बूँटा भरे भुजन पै भारी,
बेलन बाँदी कोरे।
कायल करण कुयलियाँ 'ईसुर'
दो छाती के दोरे।

आज भी कुछ ऐसे कपडे मिलने लगे है, जिनमें चित्रो की भरमार रहती है। सिनेमा की तारिकाएँ चित्रो के रूप मे कई रेशमी कपड़ो मे समा रही है।

गुदना गोदनेवाली चित्रों की आत्मा को अच्छी तरह पहचानती है। उसे 'चित्र-कला विशारदा' कहा जाय तो अनुचित न होगा। वह सब प्रकार के चित्रों को कोमल शरीर पर गोद देती है। एक युवती अपनी सारी देह पर कृष्ण भगवान् के चित्रों को गुदवाना चाहती है और उसकी यह कामना एक ग्रामनिवासिनी गुदनारी पूरी करती है—

1. प्राचीन भारत के कलात्मक विनोद, पृष्ठ 64

गोदो गुदनन की गुदनारी,
सबरी देह हमारी।
गालन पै गोविन्द गोद दो,
कर मे कुज-बिहारी।
बइँयन भौत भरो बनवाली,
गरे धरो गिरधारी।
आनन्द कन्द लेव अंगिया में,
माँग मे भरौ मुरारी।
करया कोद कन्हैया ईसुर,
गोद मुखन मनहारी।

× ×

निम्नस्थ बुन्देली निराई गीत मे बताया गया है कि एक भौजाई अपनी ननद के बार-बार कहने पर रावण का चित्र बनाना प्रारम्भ करती है। हाथ-पैर और बत्तीसो दाँत सुन्दरता के साथ बनाये गए थे। बीच का पिंड पूरा चित्रित न हो पाया था कि इतने में राजा राम आ पहुँचे और चित्र अधूरा ही रह गया। ननद ने शिकायत की और अपने भाई के द्वारा भौजाई को घर से बाहर निकलवा दिया—

"ननदी भऊजी दोनो पनियाँ का निकरी,
एकै मत दोऊ कीन।
गगरी तो धर दिहिन कुँवन जगतिया,
गोउरी अइल की डार।
खिरिक करौदा खाय जो लागीं,
चुभिगा अगुरिया में काँट।
मै तो सौं पूँछौ वारी की भऊजी,
रावन उरेह दिखाव[1]।
रावन ननदी मै तो उरेहौं,
जो घर करौ न लवार[2]।
आँखी मोरी फूटै घइला मोरा फूटै,
मै घर करौं न लवार।

1. रावन का चित्र बनाकर दिखाओ। 2 शिकायत।

हाथ लिखिन है, दुई पाँव लिखिन है,
लिखिन बतीसौं दाँत।
बिचै का पिंड लिखे नहिं पाइन,
आय गए राजा राम।
भइया गोड भुँइ धरै न पाइन,
बहिनी करै लवांर।
जउन राजा तोरा बैरी रे भइया,
भऊजी उरेह बनाव।
तुमही अहो मोरी बहिनी प्यारी,
भऊजी का देव निकार।
एक बन नाके दुइ बन नाके,
तिसरी माँ लाग पियास।
होय ननदी बन की हिरनिया,
बन भटकत जनम जाय।
होय न ननदी चूल्हे की बढनियाँ,
चूल्हा बटोरत जन्म जाय।

× × ×

बुन्देलखड की एक युवती चुनरी रंगवाने के लिए रंगरेज को देती है और कहती है कि इसके किनारों पर मायके का दृश्य अंकित करना। आँचल में माता के बोलों को छापना तथा कुशलता से दिखाना कि माता घर के आँगन में बैठी है और पिता पौर के दरवाज़े पर हैं। चित्रकला की यह गहराई हमें लोक-काव्य में अधिक मिलती है —

ढिग - ढिग लिखियो मोरो मायको,
नारे सुअटा, ऊँचरन माई के बोल।
माई बैठी मँझधरा,
नारे सुअटा बबुल पौर दुआर।।

× × ×

जनेऊ के गीतों में गाया जाता है कि एक ब्रह्मचारी अपने बाबा का घर पूछता है। उसे बताया जाता है कि जिस घर की दीवार पर चित्र अंकित हों, वही

उसके बाबा का घर है—

द्वारेन द्वारे बसवा फिरै बखरी पूछै बवा की हो।
द्वारेन उनके है कुइँया, भीती चित्र उरेही हो।
आँगन तुलसी के बिरवा वेदवन भनकारी हो।
सभवन बैठे बाबा तुम्हरे, बैठे पुरवै जनेउवा हो।

लोक-काव्य मे चित्रित राम चित्रकला के विशेष अनुरागी है। वे उसी युवती को पत्नी-रूप मे ले जाना चाहते है जिसने खिडकी पर चित्र बनाए है। चित्रो पर विमुग्ध राम सास से कहते है—

दान दहेज सासु कुछ नाही लेवों हो
ना ना लेवों चढने क घोड़ हे।
जउन निवइया यहि झँझरी उरेह ले,
तिन्ह कौ मै संग लइ जाब हो।

—हे सास ! मैं दहेज मे कुछ नही चाहता हूँ। मुझे चढ़ने के लिए घोड़े की भी आवश्यकता नही है। मैं तो उस युवती को साथ ले जाऊँगा, जिसने खिड़की पर सुन्दर चित्र बनाए है।

सास कहती है कि बेटा, मै तुझे दहेज भी खूब दूँगी और साथ में सीता को भी भेजूँगी, जिसने ये चित्र बनाए है :

'दान दहेज बाबू सब कुछ देवो,
हो देवों मैं चढ़ने क घोड़ हे।
बेटी सीता देई झँझरी उरेहली,
तिन्ह हूँ क सग लइ जाहु हो।'

—बाबू, मैं दान-दहेज सब कुछ दूँगी और चढने को घोड़ा भी दूँगी। मेरी बेटी सीता ने ये खिड़की पर सुन्दर चित्र बनाए है, उसे भी तुम अपने साथ ले जाओ।

इस प्रकार के अनेक लोक-गीत यह प्रमाणित करते है कि हमारे लोक-जीवन में चित्रकला सदैव मान्य रही है। सस्कृत के प्रसिद्ध महाकवि कालिदास के 'अभिज्ञान शाकुन्तल' नाटक का नायक दुष्यन्त अपने विरही जीवन मे शकुन्तला के चित्र बनाकर समय बिताता था। 'मेघदूत' काव्य में बताया गया है कि अपने प्रिय (यक्ष) के वियोग से व्याकुल यक्ष-पत्नी यक्ष के चित्रों को बना-बनाकर अपने मन का सान्त्वना दिया करती थी :

आलोके ते निपतति पुरा-सा वलि व्याकुला वा।
मत्सादृश्यं विरह तनु वा भाव गम्य लिखन्ती।
पृच्छन्ती वा मधुर वचना सारिकां पञ्चरस्थां
कच्चिद्भर्त्तुः स्मरसि रसिके त्वं हि तस्य प्रियेति।

—'उत्तर मेघ'

—मेरी प्रियतमा कौतुम या तो देवाराधना में संलग्न पाओगे या वह विरह से कृशगात मेरी प्रतिमूर्ति अंकित करके चित्र के कल्पना-लोक मे मेरी आकृति की ओर निहार रही होगी या फिर पिंजड़े मे बैठी हुई मृदु भाषी मैना से पूछ रही होगी कि मेरे प्रियतम की प्रिय सुर-सारिका, कभी तुम्हे अपने स्वामी की याद भी आती है।

'मेघदूत' का शापित यक्ष भी गेरु से अपनी प्रियतमा की प्रतिकृति वनाता है और उसे मना-मनाकर अपने अधीर मन को समझाता है लेकिन आँसुओं की धारा से मन्द ज्योति आँखे चित्र को भी भली-भाँति नही देखने देती—

त्वामालिख्य प्रणय कुपिता धातु रागैः शिलाया—
मात्मान ते चरण पतित यावदिच्छामि कर्तुम्;
अस्त्रैस्तावन्मुहुरुपचिर्दृष्टि रालुप्यते मे
क्रूरस्तस्मिन्नपि न सहते संगम नौ कृतान्तः।

—'उत्तर मेघ'

—एक शिला पर गेरु से तुम्हारी प्रतिकृति बनाकर जब अपने आपको (तुम्हें मनाते हुए) तुम्हारे पाँवो मे पडा हुआ चित्रांकित करने की इच्छा करता हूँ तो घनीभूत अश्रु-संपात मे मेरी दृष्टि विलुप्त हो जाती है। ओह क्रूर विधाता को चित्र में भी हमारा संयोग असह्य हो उठता है।

रामचरितमानस में गोस्वामी तुलसीदास ने भगवती सीता की सुकुमारता बताते हुए चित्रकला की प्राचीनता को भी दिखाया है। कौशल्या राम से कहती है कि वन मे सीता कैसे निवास कर सकती है ? वह बन्दर के चित्र को भी देखकर भयभीत हो जाती है—

सिय बन बसहिं तात केहि भाँती, चित्रलिखित कपि देखि डेराती।

—'रामचरितमानस' (अयोध्याकाण्ड)

महाकवि बिहारी ने भी चित्रकला की ओर संकेत किया है—

लिखन बैठि जाकी सबी, गहि-गहि गरब गरूर।
भये न केते जगत के चतुर चितेरे कूर।

—बिहारी सतसई

—उसकी तसवीर बनाने के लिए जगत के चतुर चित्रकारों ने (घमण्ड के साथ) प्रयत्न किया लेकिन उस नायिका के पल-पल मे बढने वाले रूप-सौन्दर्य को कोई भी चितेरा चित्रित न कर सका, वह स्वयं मोहित होकर तूलिका चलाना भूल जाता था।

'साकेत' की उर्मिला भी अपने प्रिय की छवि को चित्रित करने की कोशिश करती रहती है। वह भी चित्रकला-विशारदा है—

लाना, लाना, सखि, तूली !
आँखों में छवि भूली।
आ, अंकित कर उसे दिखाऊँ,
इस चिन्ता से निष्कृति पाऊँ,
डरती हूँ, फिर भूल न जाऊँ,
मैं हूँ भूली-भूली।
लाना, लाना, सखि, तूली !

—साकेत, (नवम सर्ग)

इस प्रकार हमारे जीवन की चिरसंगिनी यह चित्रकला गहरी भावनाओं से पूर्ण है।

21

लांगे मास असाढ़ सुहावन

(किसान बारहमासी)

बारहमासी की परम्परा हमारे साहित्य में वहुत समय से चली आ रही है। संस्कृत साहित्य मे बारहमासी का सुन्दर रूप हमे मिलता है। हिन्दी के प्राचीन एवं अर्वाचीन कवियो ने बारहमासे लिखकर हृदय की अनुभूतियों का भावुकता के साथ चित्रण किया है। विद्यापति एवं जायसी की विरह-भावनाएं हृदय को छू लेती है। 'पद्मावत' महाकाव्य मे भावुक जायसी ने नागमती का जो विरह-वर्णन किया है, वह एक आई हुई पद्धति का परिचायक है। सेनापति ने भी बारहमासों की परम्परा को अपनाकर अपने सुकुमार भावो को स्पष्ट किया है। वर्तमान काल मे 'साकेत' का विरह इस बात का समर्थन कर रहा है कि हमारे राष्ट्रपति मैथिली-शरण गुप्त को पुरातन भावनाओ एव मान्यताओ के प्रति आकर्षण है।

बारहमासे अथवा बारहमासी मे प्रकृति का चित्रण उद्दीपन के रूप में ही होता है। इसमे विरहिणी की दशा के चित्र अंकित रहते है। उसके मन की स्थितियों पर विशेष प्रकाश डाला जाता है। लोक-काव्य मे यह बारहमासी एक विशिष्ट स्थान रखती है। हमारे शिष्ट साहित्य मे विरह-वर्णन की जो परम्परा है वह लोक-काव्य की ही देन है। लोक-साहित्य का प्रभाव बड़ा व्यापक होता है। जैन साहित्य मे प्राप्त बारहमासी में विरह के साथ-साथ विरक्ति एवं भक्ति का भी निरूपण हुआ है। जो धार्मिकता की प्रबलता का सूचक है।

युगो से पीड़ित किसानों के प्रति आज सहानुभूति है। उनके सुख-दुख आज हमारी भावनाओं मे रम रहे हैं। गाधीवाद ने हमारे काव्य को प्रभावित किया और हमारे कवियो, लेखको एव कलाकारो को धरती-पुत्र की साधना को पहचानने के लिए उत्सुक किया।

पृथ्वी के इस लाल के भाग्य ने अब पलटा खाया है, वह जगा और उसने अपने

अस्तित्व को पहचाना। आधुनिक युग मे उसकी गाथा गाई जा रही है। उसकी गरिमा मे कविताएँ लिखी जा रही है। प्रेमचन्दजी की कहानियों तथा उपन्यासों मे तो कृषक-वर्ग छा गया है। राष्ट्र-प्रेमी साहित्यकारो ने किसान को ही अब विशेष रूप से अपनाया और अपनी प्रबुद्ध लेखनी का लक्ष्य बनाया है। कई काव्य कृषक की वेदना से शब्दायमान हो रहे है। किसान-सतसई लिखकर हमारे सहृदय कवि ने हिन्दी-काव्य मे एक नवीन परम्परा को जन्म दिया। आज का युग कृषक की प्रगति का समय है। धरा और आकाश का वैभव अब किसान की भुजाओं के श्रम पर ही अवलबित है।

मुझे लोक-साहित्य के सग्रह में कई किसान बारहमासियाँ प्राप्त हुई है। लेकिन लहर (विजावर-बुन्देलखंड) ग्रामनिवासी प० घनश्याम पाण्डेय, साहित्य-भूषण की किसान-बारहमासी अपने रूप में विशेष सुन्दर है। आप एक भावुक कवि और लेखक है। ग्राम में रहते हुए आपने वहाँ की सभ्यता और संस्कृति का अच्छा अध्ययन किया है। सरस्वती के इस मूक सेवक की साधना बहुमुखी है। आपने बहुत कुछ लिखा है। इस उद्धृत बारहमासी में आप बुन्देलखंड के कृषक से परिचित होकर उसकी ज़िन्दगी के उतार-चढाव को देखेंगे। उसकी भावनाएँ, कामनाएँ तथा इच्छाएँ कितनी साधारण है, उसका जीवन कठोर होता हुआ भी कोमल है, उसकी विकलता में भी सरलता है, वह गरीब होता हुआ भी सतोषी है, परिमित और रूखे भोजन मे भी उसे मोहन-भोग का स्वाद मिलता है, फटे हुए कपड़ो में भी वह स्वर्गीय जीवन का आनन्द भोगता है। सचमुच पं० घनश्यामजी ने अपनी इस बारहमासी मे बुन्देली लोक-जीवन का बड़ा ही सलौना चित्र खीचा है। प्रकृति का मनोहारी रूप तो हमें ग्रामो में ही देखने को मिलता है। ऋतुएँ आती हैं और चुपचाप चली जाती है। नगर-निवासियों को इनसे बातचीत करने का कभी अवसर ही नही मिलता। लेकिन गाँवों मे रहनेवाले प्रकृति की गोद में सोते और जागते हैं, खेलते और विहार करते हैं, गाते और रोते हैं। बारह महीनों मे प्रकृति के जितने भी रूप बदलते हैं, उन सबको हम इस बारहमासी मे देख सकते है। यह बारहमासी उन बारहमासियों के समान नही है, जिसमें एक युवती विरह से व्याकुल होकर अपने पति के आगमन की प्रतीक्षा करती है और रातों को तारे गिन-गिनकर काटती है। यह बारहमासी उस किसान की जीवन-कहानी है, जो अपने परिश्रम से धरती मे सोना उगाता है और जंगल को मंगलमय बनाता है। कर्मठ, साहसी

और विवेकी किसान इस बारहमासी मे विपत्तियो से लड़ता है और वर्षा, घाम, शीत आदि की चिन्ता न करके मानव-जाति को जीवित रखने के लिए अथक परिश्रम करता है। हमारी प्राचीन बारहमासियों मे केवल रुदन है, मनो-व्यथा है, हृदय की कसक है और जीवन के प्रति उदासीनता है। उनमे उत्साह की बहुत कमी है और भाग्य की कठोरता के प्रति झुंझलाहट है। लेकिन इस किसान बारहमासी मे जीवन के साथ उत्साह है, और कर्मशीलता है। इसमें जीवन के प्रति ममता है, मोह है, आकांक्षा है और गहरी कामना है। वे बारहमासे तालाब मे रुके हुए पानी के समान गतिहीन हैं। उनमें जो सरसता है वह पवन के समान अस्थायी है और इसीलिए अब उनकी मनमोहकता में अधिक खिंचाव नहीं रहा। माना कि उनमे अनुभूतियाँ है; प्रेम की सुन्दर झाँकियाँ हैं, विरह की लपटें हैं, और मानव-मन की चीत्कारे हैं, लेकिन जीवन का यही तो सब कुछ नहीं है। जिन्दगी तो सुख-दुख, गति-स्थिरता, शान्ति-अशान्ति, शीत-उष्ण, दिन-रात, सुबह-शाम, सफेदी और कालिमा आदि का मेल है। इन दोनो भावो के साथ इन्सान को आगे बढते जाना है और अपनी मंज़िल के पास पहुँचना है। इसी मंज़िल की राह यह बारहमासी है।

अन्नपूर्णा मातु के चरण कमल सिरनाय।
बारह मास किसान के बरनन करौ सुनाय।
खेती की जो रीत है, देस बुंदेल सुखण्ड।
सुभग ग्राम जीवन सरस, सरल सुखद वरवण्ड।

असाढ़

लागे मास असाढ सुहावन, बादर गरजन लागे।
घर टापर[1] की छौनर करवे, चित किसान के जागे।
नए-नए ठाट ठटावे कोऊ, हर[2] बखरन[3] में पागे।
बैल हड़ारीं जुवाँ जुड़ारी, भए हरवाहे आगे।
सैल[4] खोल बैल के कांधैं, धरी जुवाँ की पारी।
नान गाँठ दै विदै हरैनी[5], सीग पगैया[6] डारी।
घाल पैनियाँ अरई कोदे, राद हरैया मारी।
कुदवा मूँग बसारा काकुन, जुनरी बई अमारी॥

---

1. छप्पर, 2 हल, 3. बखर, 4. जुए के दोनों सिरों पर बैलों के कंधों के पास लगने वाली गोल छोटी लकड़ी, 5. जुए की रस्सी को अगैता में बांधने के लिए लगाई गई लकड़ी, 6. बैल बांधने की रस्सी।

सावन

सावन मास सुहावन लागे, भए किसान उर चैना[1]।
बैलए डेल और कुदवरी, वाँगर मे चित दैना।
काटन काड़न करी खेत की आटक तनक रहैना।
दुआसर त्यासर चार बाब कर, पाँच बाब कर बैना।
बैकर तिली और कुटकी को, हरवाहे सुख पावै।
पूनो और अमावस के दिन, उन्हे किसान जिमावै।
झिरना झिरे पिये जल निरमल, कल-कल शब्द सुनावे।
हरो हरो सब हार[2] दिखावै, पछी कूजत जावे।
पाँच टका की लाखे लेलै, निज निज त्रियन[3] लखावे।
काही तूसी रेजा पहरे, महदी हाथ रचावे।
ग्राम त्रिया मदमाती जाती, कजरी सावन गावे।
देखत ही वह छटा बने, घन घोर घटा घिरि आवे।

भादौं

लागो भादौ गरज बरस के, घर-घर परी निदाई।
कुदवा उरदा धान निदाई, जुनरी[4] दई बिराई।
मड़वा गाड़ रखावन जावे, ढववा[5] लये छवाई।
परे पुरे कोऊ गावे कूके, बाजे देय बजाई।
हरवाहे नित बैल ढील के, हार चरावन जावें।
पॉव पन्हैया कमरा खोऊवा, धरे कुलरिया[6] रावे।
चरवा महुआ दवे बगल में, पैना हाथ हलावे।
जुरमिल जावे जब किल कोटन, बैठ ददरिया गावे।

क्वॉर

क्वाँर किसान देख के फूले अपनी-अपनी स्पारी।
जोंन मेंड़ पै ठाड़े होवे, हरी भरी है प्यारी।
निरमल चंद सरद निश निरमल, फैल रही उजयारी।
झीलन और पुखरियन फूली, लखो गदूल[7] अपारी।

---

1. आनन्द। 2. कृषि-क्षेत्र, 3. स्त्रियाँ, 4. ज्वार, 5. मचान, 6. कुल्हाड़ी (छोटी), 7. एक प्रकार का जल का पुष्प।

कोउ किसान चाव सों अपनी, जोतन लगो उन्हारी।
तरी कछार कुवा जोतें कोउ, होन न देत पछारी[1]।
चारो काट धरे कोउ सूखन, पूरा बना कवारी।
घर-घर परी कटाई की अब, स्पारी की है त्यारी॥

कातिक

कातिक मास किसान हार जुर कुदवा काटन जावें।
पानी के घैला[2] धर मूड़न, रोटी कांख दबावें।
कोनेउ बैयर[3] धरें चँगेरी[4] कैयां लरका[5] दावें।
हँसिया खुसो कोउ की कूलन, हाथन कोउ भुलावें।
माँगे पारें दये कछोटे, नुनें[6] ददरियाँ गावे।
तीखें[7] करें मसकरी कोउ, लुंदरन[8] से इठलावें।
कबहूँ काटें बैठ बैठ के, निहुर-निहुर वे जावें।
कोनऊं बैठी छेवलन जरियन[9], लरकन दूध पिलावे॥

अगहन

अगहन त्यारी करी रहँट की, काठ अनेकन जोरें।
भोरी भोरा भैसा पनरा, भजी माल की डोरें।
किरवारी बदरोट पनारी, अरा पई की दोरें।
माल वरउवा मड़र सिगारें, नए धवा की पौरें।
लगा गदेलो जुजै रहट कों, बैल भौन पै छोरें।
घरियाँ बाँधी वरब[10] लगा दओ, कूड़न पानी फेरें।
तापें कोड़न पियें तमाखू, तिरं-विरं[11] से हेरें।
कमरा ओढ़ें कप-कप गावें, लमटेरा की टेरें॥

पौष

पूष फूस कौ तापें बैठे, घर-घर लगी अथाई।
चरचा करे सुने बुड़की की, गप्पें देत हवाई।

---

1. देरी, 2 मिट्टी का छोटा घडा, 3. औरत, 4. बांस का बडा टोकरा, 5. बच्चा, 6. मीठे स्वर में, 7. गहरी, 8. छैला, 9. झाड़ी, 10. नाली बनाना, 11. इधर-उधर।

बना ठडूला[1] ढुल्ला बत्तियाँ, मेलन भई जवाई।
जूना कोठ गमैयाँ लावे, घर-घर सौदा आई।
पोड़ा[2] सकला और महारूं, आदो[3] मिरचा लाई।
मेलन जाय-जाय सुख पावे, कूँकूँ देत बजाई।
पुस बलियाँ जब कड़ी खेत मे, देख खुशी अधकाई।
आस लगी किसान हिये मे, भई बसन्त अबाई।।

माघ

माघ मास में होरा वाले खावें खेतन जाई।
खुटका करन लगे बालन को, देख न परै रहाई।
गदरा परो पकी जब खेती, हरिया देत दिखाई।
बजाॅ तारियाॅ गुथना मारे, मेड़े रहे रखाई।
हरिया हरिया कै-कै दोरे, झुर्रा-झुर्रा धावे।
दिन के पछी रात जनावर, परे किसान रखावे।
मसरी तेवरा चना चरपटा, पके-पके उखटावें।
कूट काट के घरै लिआवे, घर के लख सुख पावे।।

फागुन

फागुन खरयाना करनी के, घर-घर होत नुनाई।
ढवली भर भर लांक समेटी, बुझवा धरे बँधाई।
लगा पचासी सैका ऊंचे, खरयाना फैलाई।
लौटा पल्टा लाक सुखाई, मेंडी भरी सुहाई।
पथे बरुला[4] होरी के दिन, पावन होरी आई।
हुर हारे लरका जुर आए, हल्ला करें अथाई।
टटवा जटवा लै भग जावे, होरी देय जराई।
कीच गिलाव और गोबर की, सुदर फाग मचाई।।

चैत

चैत गड़ावन नहे बैलवा, दाएँ दई मन भाई।
धरे तिवाव बाव वैहर के, छवला धरे भराई।

---

1. उर्द की दाल का एक व्यंजन, 2. मोटा गन्ना, 3. अदरख, 4. गोबर के बने हुए छोटे कंडे।

टटियाँ बाँध उडावन कीन्हा, ढुलियन करी नपाई।
सरा गोन बीसी बत्तीसी, धरो नाज घर गाई।
गाँडन फाँदन भुसा ढोय के, भर-भर धरी भुसोरें।
बैल चराये बाँध-बाँध कें, फूट कड़ी है मोरे।
धरे जवारे पूजे देवी भवा नारियल फोरे।
भाव बैठकें घर-घर होवे, लेन भवती दौरें॥

बैसाख

बैसाख मास पटुआरी आके, डुडी दई पिटाई।
बाँकी ठेकी किस्त तकावी, करियो जमा तिहाई।
आज रोज़ जो जमा न कर है, जै है कान तनाई।
अमल देव अरु लेव रसीदे, हीला करो न भाई।
साव सई कोउ खोजन लागे, घर से देवै कोई।
नाज बेच कोउ जमा करत है, गहनो धर-धर सोई।
येके कहे मूर मे टोटो, लाभ ना हमको होई।
अवना करवी खेती कबहूँ, पुँजी गाँठ की खोई॥

जेठ

जेठ मास की खरी दुपारीं, हाथ मूछ पै फेरें।
जूड़ो पानी पियैं चैन से, परे खटोली हेरें।
तनक दिने जब सोके बैठें, मन की बात नबेरें।
किसत कहनियाँ कहे रात कें, इतै आउ कै टेरें।
परो डोगरो जिठा जवै तब, हिय किसान कछु जागे
डारत खात खेत में कोऊ खाडी खपरन पागे।
बेलें सूटे भाँजे कोऊ, कोउ छोनर में लागे।
कंडा लकड़ी धरें सुदिन से, सियाराम दुज आगे।

× × ×

बारह मास किसान के, अति संक्षेप बखान।
भूल चूक घनश्याम की, कीजै क्षमा सुजान॥

22

सब कर, हर तर

कृषि-उपकरणो मे हल की विशेष उपयोगिता है। इसके द्वारा ही किसान कठोर जमीन को कोमल बनाता है और पृथ्वी मे सोना उगाता है। हल कृषक का शस्त्र है। आने वाली विपत्तियो का सामना वह हल की मुठी (मूंठ) को पकड़ कर करता है। सम्पूर्ण संसार इसी हल की कृपा से अन्न प्राप्त करता है और अपने सूखते प्राणों को हरा-भरा बनाता है। खेती की सफलता इसी लकड़ी के हल पर अवलम्बित है। भगवान् कृष्ण के भाई बलराम ने हल को अपनाकर अपनी शक्ति को बढ़ाया था। आज उनको यह विश्व 'हलधर' कहकर याद करता है। दुनिया के सब काम हल के नीचे है। 'सब कर, हर तर' कहावत में बताया गया है कि सबके हाथ हल के नीचे है। हाथ का कार्य है काम करना। मनुष्य हल के द्वारा उत्पन्न अन्न को ही खाकर काम करने की शक्ति प्राप्त करता है। अथवा यों समझिए कि ससार के समस्त जीव दो रोटियों के लिए काम करते हैं और ये दो रोटियाँ हल की नोक से मिलती हैं। इसलिए सबकी कार्यशक्ति हल पर आधारित है।

गाँवों में हलों की संख्या पर किसान की सम्पत्ति का अनुमान किया जाता है। अधिक हलो के स्वामी को हम बड़ा किसान कहते हैं। एक कहावत में बताया गया है कि दस हल रखने वाला किसान राव कहलाता है और बड़ा किसान वही है जो चार हलों से खेती करता है—

दस हर राव, आठ हर राना, चार हरों का बड़ा किसाना।
दुइ हर खेती, एक हर बारी, एक बैल से भली कुदारी।

अन्न से जिनके घर भरे हुए हैं, वे ही किसान सच्चे राजा है। उनका हृदय विशाल होता है। वे न कभी हाथ पसारते हैं और न किसी के आगे झुकते हैं। संसार ही उनके सामने अपना हाथ फैलाता है। लेकिन राजा के समान सुख भोगने वाले वे ही किसान होते है जिनके पास कम से कम चार हल हों। एक हल रखना तो
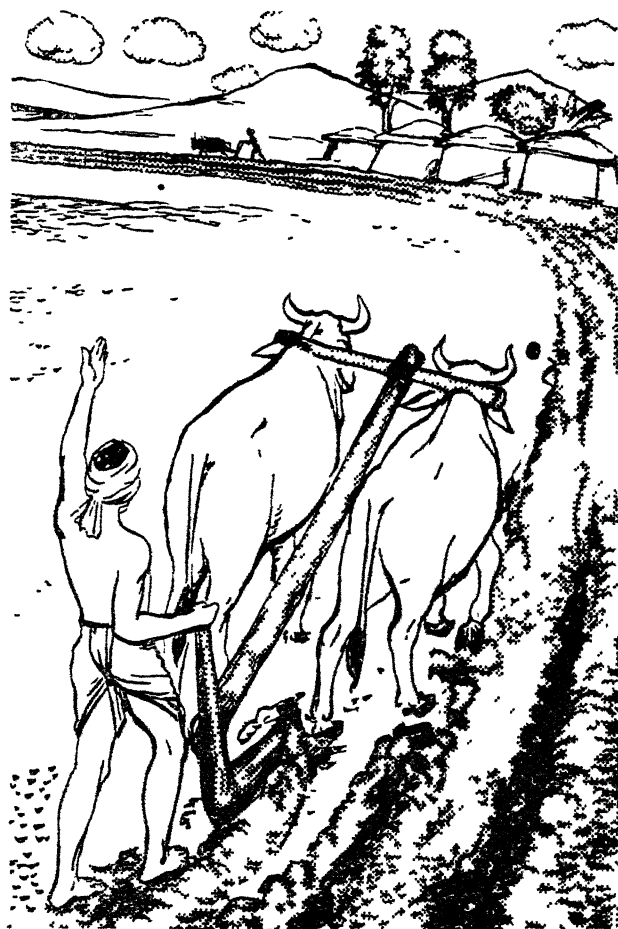
मानो बैलों की हत्या करना है।

एक हर हत्या, दुइ हर काज।
तीन हर खेती, चार हर राज॥

× ×

जिस किसान के पास हल और बखर नही होता वह जल्दी नष्ट हो जाता है। वह निर्बल कृषक अपनी ज़िन्दगी को रो-रोकर काटता है।

वह किसान है दूबर दाबर।
जी के पास नहीं हल बाखर॥

खेती में हल की प्रधानता बताते हुए अनुभवी किसानों ने बताया है कि कृषि का पूरा फायदा वही उठा सकता है जो खुद हल चलाता है। हल के साथ रहने वाला भी खेती का कुछ सुख पा लेता है लेकिन दूसरो से खेती कराने वाला कुछ नही पाता। लाभ तो दूर रहा, वह बीज भी खो बैठता है—

उत्तम खेती जो हर गहा।
मध्यम खेती जो सग रहा।
जो पूछेसि हरवाहा कहाँ?
बीज बूड़िगे तिनके तहाँ!

साधारण लकड़ी से बने हुए हल की आवश्यकता किसानी में सदा बनी रहती है। पृथ्वी का पुत्र किसान इसकी पूजा करता है और खेती की सफलता का इससे वरदान भी माँगता है। श्री पराशर आचार्य ने हल के विषय में बहुत कुछ कहा है। इसकी निर्माण विधि को समझाते हुए उन्होंने इसके अवयवों (हरीस, अगैता, अकुरिया, परैथा, गाँगरौ, मुँढ़िया, खरवाँती, कटारौ, पधील, फार, काँटी, हरैनी आदि (बुन्देलखडी भाषा मे ये हल के हिस्सों के नाम हैं) की लम्बाई-चौड़ाई पर भी प्रकाश डाला है। वृहत्पाराशरी के 'हल-विधानम्' प्रकरण में कृषि के प्रधान उपकरण—हल के सम्बन्ध में कई अनुभवपूर्ण बातें कही गई हैं।[1]

---

1. "लाङ्गल सम्प्रवक्ष्यामि यत्काष्ठं यत्प्रमाणतः।
हलीषायास्तथा मानं प्रतोदस्य युगस्य च॥1॥
चत्वारिंशत्तथा चाष्टावंगुलानि कुरास्मृताः।
अथायामोऽङ्गलैर्भाव्यो हलीषा वेधतश्च यः॥2॥
षोडशैवतु तस्याधः षड्विंशतिस्तथोपरि।
वेधस्तस्याश्च कर्त्तव्यः प्रमाणेन षडङ्गुलः॥3॥
अंगुलैश्चाष्टभिस्तस्माद्वेधस्तु प्रातिहारिकः।

हल मज़बूत लकडी का बनाना चाहिए। ऊमर, वट, बेल, नीम, बहेड़ा, पाकड़ आदि वृक्षों की लकड़ी का हल कमज़ोर होता है और वह कृषि के कठिन काम के लिए अनुपयुक्त कहा गया है

न सीर क्षीरवृक्षस्य न विल्वपिचुमन्दयोः।
इत्यादीनां तु कुर्वाणो न नन्दति चिरगृही।
प्लाक्षाक्षयोर्न तत्कुर्याद्राक्षसौ कीर्तित्तौहित्तौ।
तयोः काष्ठस्य तत्कुर्वन्ससस्यो नश्यते गृही। •

—वृहत्पाराशरी

मृदु ध्रुव क्षिप्र, चरसंज्ञक (नक्षत्रों मे) तथा मूल, मघा, विशाखा नक्षत्रों में प्रथम बार हल चलाना चाहिए :

मृदु ध्रुव क्षिप्रचरेषु मूल मघा विशाखा सहितेषुमेपु।
हल प्रवाहं प्रथमं विदध्यान्नीरोग मुष्कान्वित सौरभेयैः।"

—ज्योतिष सार

श्री अंगिरा ऋषि का कहना है कि हल चलाने के लिए मन का उत्साह ही मुख्य है—

अंगिरा मन उत्साहं विप्र वाक्यं जनार्दनः।

कुछ आचार्यों के मतानुसार गुरु, बुध, शुक्र, सोम —ये दिन हल चलाने के लिए शुभ माने गए हैं।

× × ×

प्राचीन काल में (शुभमुहूर्त मे) नरेश स्वयं हल चलाकर कृषि की गरिमा को बढ़ाते थे। आज भी हमारे कृषक भाई जेठ मे हल चलाने के पहले शुभ दिन

तस्याधस्ताच्च चत्वारि स वेधश्चतुरंगुलः ॥4॥
अष्टांगुल मुरस्तस्य वेधादूर्द्ध प्रकल्पयेत्।
ग्रीवा दशांगुला चोर्द्ध हस्तग्राही ततः स्मृत : ॥5॥
सापि तर्ज्ञै शुभा कर्या तद्वेधस्त्र्यंगुलो भवेत्।
पचांगुलमुरस्तस्य सीरस्येति विभाजनम् ॥6॥
पृथुत्व शिरसो धार्यं तलहस्त प्रमाणकम्।
अंगुलानि तथा चाष्टावुरसः पृथुता भवेत् ॥7॥
वेधाद्वहिः प्रतीहारी षट् त्रिंशदंगुला भवेत्।
सुतीक्ष्णा लोहफाला स्यान्मत्काशादिभिरवृता ॥8॥

का ध्यान रखते हैं और पुरोहित के द्वारा पूजन कराकर इसका (हल का) प्रयोग करते है। सीरा पुजति'''नामक वैदिक मन्त्र से हल की पूजा होती है और दही, दूर्वा, अक्षत, चन्दन, धूप आदि को समर्पित करके हरीश की वन्दना की जाती है। इस अवसर पर बैल गुड खाकर अपना मुँह मीठा करते है।

हमारे ऋषियों ने बढिया अन्नवाली खेती करने की शिक्षा सबको दी है—

'सुसस्या कृषीष्कृधि'

—यजुर्वेद

अतः महर्षियों के उपदेश को मानते हुए हमें कृषि-कर्म मे लगना चाहिए और हल की वन्दना में अपने मस्तक को सदैव झुकाते रहना चाहिए।

23

मानव ! 'श्रम कर, श्रम कर, श्रम कर !

ससार में श्रम का बडा महत्त्व है। यह सारी दुनिया श्रम पर ही टिकी है। प्रकृति का प्रत्येक अवयव श्रम करता हुआ दिखाई दे रहा है। आकाश मे चलता हुआ सूर्य श्रम के महत्त्व को बता रहा है। रात मे प्रकाश देने वाला चन्द्रमा कह रहा है कि श्रम करो, श्रम करो। कभी तेज़ और कभी मद होकर चलता हुआ पवन परिश्रम की ओर सबका ध्यान आकर्षित कर रहा है। रात-दिन प्रवाहित होने वाली नदी की लहरे बता रही हैं कि मनुष्य को श्रम से प्रेम करना चाहिए और आलस्य को पास न आने देना चाहिए। सृष्टि मे लगा हुआ भगवान् कब विश्राम करता है ? आराधना मे रत भक्त सदैव कर्म करने का ही वरदान माँगता है। मानव का स्वभाव ही श्रम करना है। निराश होकर बैठ जाना तो पशु की प्रवृत्ति है। इतिहास बताता है कि श्रम मे डूबा हुआ मानव ही असभव को सम्भव कर देता है। परिश्रम ही नर को नारायण बनाता है। संसार को जीतने वाला वीर श्रम से ही विश्व-विजेता कहलाया है। भगवान् महावीर, महात्मा बुद्ध, स्वामी शंकराचार्य, दया के अवतार ईसा आदि महामानवो ने अपने जीवन में श्रम को ही अपनाकर तप और साधना की है। परिश्रम करने वाले से ही भगवान् प्रेम करता है। आलसी से सब घृणा करते है। इस भूतल पर वही रह सकता है जो श्रम करे और पसीने की बूँदों से अपने शरीर को गीला बनाए। परिश्रम से दूर भागने वाले इन्सान को दुनिया मे रहने का कोई हक नही है। वे ही राष्ट्र आज उन्नति कर रहे हैं जो श्रमशील है और जहाँ की जनता उद्योग करके ही खाना जानती है। भगवान् राम ने महलो में रहना पसन्द नहीं किया। वह जंगलों मे गए और गाँव-गाँव में फिरे। उनका जीवन एक तपस्वी का जीवन था। उन्होंने अपने ही श्रम से लंका पर विजय प्राप्त की और महादानव रावण का विनाश किया। भगवान् कृष्ण ने एक साधारण परिवार में रहना स्वीकार किया। यदि वह चाहते तो राजवंश के

सम्मान को प्राप्त करते हुए सब प्रकार के सुख-वैभव को भोग सकते थे, लेकिन ग्वाल बनकर उन्होंने गायें चराई और संसार के सामने गौ-सेवा तथा परिश्रम के महत्त्व को रखा।

यह सत्य है कि श्रम कभी भी निष्फल नही होता। इसका फल अवश्यमेव

मिलता है। परिश्रम करने वाले की मज़दूरी भगवान् भी नही रोकता। धन की प्राप्ति श्रम से ही होती है। सुख-शान्ति का जनक श्रम है। गद्दों पर लेटे रहने वाले मनुष्यो का चेहरा पीला रहता है। परिश्रम ही मानव के शरीर को कान्तिमय बनाता है। वही सुख की नीद सोता है जो अपनी देह को श्रम से थकाता है। कहा जाता है कि परिश्रम आनन्द का पिता है। एक अच्छा मज़दूर एक कुत्सित पुरोहित से अच्छा है। श्रम से भयभीत होना मानव का धर्म नही है। परिश्रम से सब सुलभ है। श्रम करना ही भगवान् की सच्ची उपासना है। आज नही तो कल, प्रत्येक मानव को श्रम से ही रोटी कमानी होगी। हाथ फैलाने वाले को अब भोजन न मिल सकेगा। भरपेट वही खा सकेगा जो श्रम करेगा और अपने शरीर को कार्य में लगाएगा।

मन के सकल्प और मनोरथ श्रम से पूरे होते है। क्या सोते हुए सिह के मुख में हिरन स्वय आ जाते हैं? कभी नही। उद्योग करने पर ही शेर अपने पेट को भर पाता है। भले ही वह जगल का राजा हो। श्रम का दूसरा नाम उद्योग है। उद्योगी ही पुरुष-सिह कहलाता है।

ऐसे ही वीर पुरुष की लक्ष्मी दासी बनती है। भाग्य के भरोसे रहना कायरता है। कायर पुरुष ही आलसी बनकर हाय भाग्य, हाय भाग्य' चिल्लाता रहता है। भाग्य का निर्माण श्रम से ही होता है। यह कहना बिलकुल असत्य है कि भाग्य की रेखाएँ नही मिट सकती। दुर्भाग्य की लकीरें श्रम के पसीने की बूँदों से सरलता से मिटी है और हमेशा मिटती रहेगी। परिश्रम के बल पर ही हम अपने दुर्भाग्य को सौभाग्य मे बदल सकते हैं और सौभाग्य को आलसी बनकर दुर्भाग्य बना सकते हैं। अतः श्रम ही हमारे जीवन का परम लक्ष्य होना चाहिए। विचार करने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि श्रम ही जीवन है—और जीवन ही श्रम है। असम्भव को सभव बनाने वाला महामन्त्र श्रम है। नेपोलियन का कहना था कि असम्भव शब्द मूर्खों के कोष मे ही है।

परिश्रम ने ही दुनिया की सूरत बदल दी है। श्रम के सहारे खड़ा हुआ मानव आकाश मे उड़ रहा है, सागर की विशाल छाती पर यात्रा कर रहा है, आग में कूद रहा है और नया जीवन लेकर उठ रहा है। समुद्र की गहराई श्रम ने ही नापी है। महापर्वत हिमालय की सबसे ऊँची चोटी पर खड़ा होने वाला वीर पुरुष

परिश्रमी ही है। नया सूर्य और नवीन चन्द्रमा श्रम के हाथोंसे ही बन रहे है। पर्वतों को रेत मे बदलने वाला परिश्रम ही है। भयकर नदियों को श्रम ही बाँधता हैं। पृथ्वी के पेट से हीरा निकालने वाला परिश्रमी हाथ ही जमीन पर सोना उगाता है। किसे आशा थी कि शक्ति-सम्पन्न गोरी सरकार से हमारा भारत कुछ वर्षों मे ही स्वतंत्र हो सकेगा ! किन्तु पूज्य बापू के परिश्रम से ही आज हमारी जन्मभूमि अत्याचारियों से मुक्त हुई। श्रम के महत्त्व को समझने वाले भारत में ही दूध की नदियाँ बहा करती थीं। जब से हम भाग्यवादी बने और आलसी होकर रोए तभी से हमारा पुरुषार्थ नष्ट हुआ और हम दाने-दाने को तरसने लगे। अस्तु, जो हुआ सो हुआ अब हमें सतत परिश्रम के बल पर ही वर्तमान और भविष्य को बनाना है। हमारे राष्ट्र के भाग्य-विधाता परम पूज्य श्री जवाहर-लाल नेहरू उस समय तक आराम को हराम मानेगे, जब तक हमारा भारत अपनी पूर्ण स्वतन्त्रता की मंज़िल को न पा लेगा। वह कहते है—"अतीत समाप्त हो चुका है और अब भविष्य ही हमारा आवाहन कर रहा है। यह भविष्य आराम करने और दम लेने के लिए नही है बल्कि निरन्तर प्रयत्न करने के लिए है।"

प्रमाद (आलस्य) मानव का महान् शत्रु है। यही आलस्य इन्सान को हैवान बनाकर नरक में ले जाता है। महाराज भर्तृहरि ने कहा है—

'आलस्य हि मनुष्याणां शरीरस्थो महान् रिपुः।
नास्त्युद्यमसमो बन्धुर्यं कृत्वा नावसीदति।'

—नीति शतक

मनुष्य के शरीर में आलस्य महाशत्रु है। उद्यम के समान दूसरा बधु नही है जिसके करने से कभी दुख नही होता। 'श्रम' का व्याख्या में बताया गया है कि कर्म, प्रयत्न, उद्योग आदि श्रम के ही नाम है। कुछ विद्वानों ने भगवान्, शक्ति, आराधना, विरक्ति, विधाता आदि को श्रम के नाम से सबोधित किया है। ऐसी स्थिति में भाग्यवादियों को भी परिश्रम के महत्त्व को समझ लेना चाहिए। पूर्वकृत कर्म ही इस जीवन में भाग्य कहलाते हैं; और वर्तमान के कार्य आगे आने वाले भाग्य का निर्माण और सकेत किया करते हैं। इसलिए देवी-देवताओं और विधाता की भक्ति को छोड़कर भाग्य को ही सब कुछ समझने वाले मानव को कर्म की ही उपासना करनी चाहिए। इस भाव के समर्थन मे निम्नस्थ पंक्तियाँ पर्याप्त हैं—

नमस्यामो देवान्ननु हतविधेस्तेऽपि वशगा,
विधिर्वन्द्य:, सोऽपि प्रतिनियत कर्मैक फलद: ।
फलं कर्मायत्तं किममरगणै: किंच विधिना ।
नमस्तत्कर्म्मेभ्यो विधिरपि न येभ्य: प्रभवति ।

—नीतिशतक

—देवताओं को हमें नमस्कार करते हैं, परन्तु उनको विधाता के वश मे देखते हैं, इसलिए विधाता को नमस्कार करते है, पर विधाता भी हमारे पूर्व-निश्चित कर्म के अनुसार फल देता है, फिर जब फल और विधाता दोनो कर्म के अधीन हैं तो देवता और विधाता से क्या काम है ? इस कारण से कर्म ही को नमस्कार है क्योकि विधाता का भी सामर्थ्य जिस पर नही चलता ।

महाकवि गोस्वामी तुलसीदास ने स्पष्ट रूप मे बताया है कि यह ससार कर्म-प्रधान है । जो जैसा करेगा, वैसा भोगेगा ।

कर्म प्रधान विस्व रचि राखा,
जो जस करहिं सो तस फल चाखा ।

हमारे महर्षियो ने कर्म करने की शिक्षा सबको दी है । जीवन बहुत थोड़ा है और काम अधिक है । अत: प्रमाद को छोड़कर पूरी लगन के साथ काम करने में ही मानव की भलाई है । यह मानव-देह बडे भाग्य से प्राप्त होती है । इसलिए स्वस्थ और सुन्दर नर-शरीर पाकर श्रम करो, कर्म-रत रहो, परोपकार करते चलो और अपने सुख मे दूसरों के सुख को भी न भूलो यही महात्माओं के उपदेश हैं । भगवान् महावीर ने अपने भक्तशिरोमणि गौतम को बार-बार समझाया कि जैसे वृक्ष का पत्ता पतझड-ऋतुकालिक रात्रिसमूह के बीत जाने के बाद पीला पड़कर गिर जाता है, वैसे ही मनुष्यों का जीवन भी आयु के समाप्त होने पर सहसा नष्ट हो जाता है, इसलिए हे गौतम ! क्षण-मात्र भी प्रमाद न कर ।

मानव ! विगत जीवन की यातनाओं को भूल और श्रम करके आगे बढ़ । श्री, कान्ति, यश, आनन्द, वैभव, शक्ति आदि बिना श्रम के प्राप्त नहीं हो सकती । चलने वाले का भाग्य बढता है और सोने वाले का दैव सो जाता है । पुरुषार्थी का मित्र ईश्वर होता है और सुस्त मनुष्य पापी कहलाता है—

नाना श्रान्ताय श्रीरस्ति । पापो नृषद्वरो जनः ।
इन्द्र इच्चरतः सखा चरैवेति चरैवेति ।

—श्रम किए बिना श्री प्राप्त नही होती। सुस्त मनुष्य पापी होता है। पुरुषार्थी का मित्र ईश्वर है। प्रयत्न करो, प्रयत्न करो।

आस्ते भग आसीनस्योर्ध्वस्तिष्ठति तिष्ठतः ।
शेते निपद्यमानस्य। चराति चरतो भगः। चरैवेति चरैवेति ।

—बैठने वाले का भाग्य बैठ जाता है। खडे होनेवाले का भाग्य खड़ा हो जाता है। सोने वाले का भाग्य सो जाता है। पुरुषार्थी का भाग्य गतिशील हो जाता है। प्रयत्न करो।

चिरकाल से ससार श्रम की महिमा को गाता हुआ आ रहा है। भगवान कृष्ण ने गीता मे कर्म करने की प्रेरणा देकर अर्जुन को क्रियाशील बनाया था।

हमारा श्रम तभी सफल है, जब इससे हम दूसरो का भी उपकार करे। अपने ही लिए किया हुआ परिश्रम पवित्र नही कहा गया है। सुखी बनो और दूसरों को भी सुखी बनाओ। जियो और दूसरों को भी जीने दो। यही परम श्रम का महत्त्व है। धन का सुन्दर उपयोग दीनो की पवित्र सेवा मे है।

दौलत जो तेरे पास है, रख याद तू यह बात।
खा तू भी और फकीर की कर राह मे खैरात।

—'नजीर'

× × ×

लाभ क्या है उन करों से, जो न गिरते को उठाए।
या कि बन दानी जगत में, कीर्ति यश अपना बढाए।
व्यर्थ है वह जन्म लेना, जो जिए अपने लिए ही।
धन्य हैं वे, मृत हुए, जो सिर्फ औरों के लिए ही।

—गुलाब

× × ×

मानव ! तू मानव की ही सेवा करके अपने परिश्रम को पावन बना। यह मानव-पूजा ही ईश्वर-आराधना है। यह कभी मत भूल कि भगवान् के रूप में ही यह मनुष्य इस भूतल पर आया है। हमारी उदार एवं लोकप्रिय सरकार जनता की ही समद्धि में अनेक योजनाएँ बना रही है। इनकी सफलता मानव के

श्रम पर ही अवलबित है। आज हमारी सरकार हमारा श्रम चाहती है। मानव, उठ! नूतन शक्ति लेकर उठ! तुझमे अपार ताकत है। तू चाहे तो समार को गिरा सकता है और बना भी सकता है। श्रम करने मे लज्जा नही है, लज्जा है पाप-कर्म करने मे! हमारे राष्ट्रपिता ने मल-मूत्र अपने हाथो से साफ किया था।

मानव ! तू ही एक बार 'प्रताप' बनकर मेवाड मे गूंजा था। तेरी ही आत्मा शिवाजी बनकर इस धरा पर अवतीर्ण हुई थी। तू ही बापू के शरीर मे एक दिन जागा था। आज अनेक योजनाएँ चल रही है। श्री नेहरू ने प्रतिज्ञा की है कि वह इसी भारत भूमि पर स्वर्ग को स्थापित करेगे। वह दिन दूर नहीं है जब इसी पृथ्वी पर दूध की नदियाँ बहेगी। आँखे खोलकर देख, मानव ! दुनिया कितनी आगे बढी जा रही है—केवल तेरे ही श्रम का सहारा लेकर।

प्रत्येक मानव को एक-दूसरे के लिए श्रम करके पूज्य बापू के आदर्शों को अपनाना चाहिए। "हम जो भी कार्य करते है उसके पीछे एक निश्चित तत्त्व रहता है। प्रत्येक आचरण किसी न किसी तत्त्व ज्ञान पर आधारित होता है। आज यह विश्वास हो गया है कि मनुष्य को इस संसार मे रहकर सुख व मुक्ति प्राप्त करना है। मनुष्य ही देवता है। उसीकी सेवा करना सबसे बडा धर्म है। आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक कष्टो और असुविधाओ से मुक्ति मिलने पर ही मनुष्य सुखी होता है। आज की समस्या का सबसे अच्छा समाधान यही है कि मनुष्य के ऊपर मशीन न आरूढ होने पाए। 'जिओ' और 'जीने दो' की सार्थकता इसी मे है कि सभी एक-दूसरे के जीने के लिए श्रम करें और अपने को गांधीजी के विचारों के अनुसार ढालें।

—आचार्य डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी

पंचवर्षीय योजनाओं ने जंगलों मे मंगल कर दिया है। ऊसर जमीन आज फसलो से हरी-भरी हो रही है। पहाड मिटकर बालू बन गए हैं। बलखाती हुई सरिताएँ प्यासी पृथ्वी की प्यास बुझाने मे लगी हैं। बडे-बडे बाँधो ने गगा-यमुना की तीव्र गति को मन्द बना दिया है। इन महानदियो का जल आज जन-जीवन के लिए विशेष उपयोगी सिद्ध हो रहा है। बिजली की चमक से ग्रामो का अन्धकार विलीन हो रहा है। शिक्षा-प्रचार ने निरक्षरता को मिटाने की सौगन्ध खाली है। मन्दिरों के दरवाजे अब सबके लिए खुल चुके है। आज कोई अछूत नही है।

ये महान् परिवर्तन केवल मानव के श्रम पर ही हुए है। आज का कवि श्रम के गीत गा रहा है—

यह धरती ही स्वर्ग बनेगी, श्रम की बूँदों को पहचानो।
श्रम के बल पर प्रतिमा बोली।
श्रम के बल पर धरती डोली।
श्रम के बल पर टूटे बधन।
श्रम के बल पर फूला नन्दन।
हीरे-पन्ने तुम्हे मिलेगे, काली मिट्टी को तो छानो।
यह धरती ही स्वर्ग बनेगी, श्रम की बूँदों को पहचानो।

—चन्द

× × ×

आज हमें श्रम-दान चाहिए
और नया इन्सान चाहिए।
आज हमें श्रम-दान चाहिए।
एक नया ईमान चाहिए।···

—श्री

× × ×

श्रम में जीवन-शक्ति है।
श्रम में ईश्वर भक्ति है।

—कुमार

श्रम ईश्वर है। आज हमें इसी परमात्मा की आराधना करनी है। प्रातः-कालीन सूर्य की किरणें कह रही हैं—

मानव ! श्रम कर, श्रम कर श्रम कर !

24

सांवन आयो री मनभावन !

सावन के आते ही गाँवों में उल्लास की सरिताएँ बहने लगती है और हरी-भरी धरती के आँगन मे मगल-गीतो के रसभरे स्वर पूरे वातावरण को आनन्द-मय बना देते है। वृक्षो की भुकती हुई शाखाओं पर झूले पड जाते हैं और नवेली बधुएँ झूल-झूलकर जो गीत गाती हैं वे श्रोताओं को कुछ समय के लिए सुखमग्न कर देते है। बहने अपने भाइयो के घरो मे आकर ससुराल की मनोरजक वार्ताओं को सुनाती है और कभी-कभी ननदो के कटु व्यवहार की भी आलोचना करने लगती है। भविष्य की चिन्ताएं भी उन्हे कभी विह्वल कर देती है।

इन झूलों के गीतों के अनेक स्वर होते हैं। कुछ तो ऐसे है जिनमे जीवन की मादकता और सरसता रहती है तथा कुछ ऐसी वेदना को जगा देते है जो सुख की घड़ियो को नीरस करके मौन हो जाते हैं। एक ओर यदि आप बहनों को भाई की सुख-समृद्धि के गीत गाते हुए सुनते हैं तो वही दूसरी ओर आप विरह के मार्मिक बोल भी सुन सकते हैं। वृक्ष की लचकती हुई शाखा मुखरित होकर अपनी सहेली (झूलने वाली) की भावनाओ को कपित पल्लको के माध्यम से अधिक अभिनयात्मक बना देती है। रगीन साड़ियों से सुसज्जित रमणियाँ कजरी, बारहमासी, सावन, रसिया, राछरे आदि गाकर सावन की साध को पूरा करती हैं। सूर्य के अस्त हो जाने पर जब काली चादरे रात की कालिमा को अधिक श्यामल बनाती है, तब सॉसो से अनुमति पाकर बहुएँ अपनी छोटी-बड़ी ननदों को मनाकर झूलों के पास आती है और प्रतिबन्धो को भुलाकर चमकती हुई बिजली को अपने आभूषणो को एक बार नहीं अनेक बार दिखाती हैं। बनारसी साड़ी के छोर जब उन्मुक्त होकर पवन के साथ उड़ने लगते हैं तब कोकिलकंठी के मदिर गीत गगन की नीलिमा में थिरकने के लिए उतावले हो उठते हैं। सावन की सरसता अचचल-मना नारियों को भी आकर्षित कर लेती है और वे भक्ति के

गीतों को गाकर विराग को सजग कर देती है। एक बहन गाती हुई बदरिया से कह रही है कि वह उसके भ्राता के देश मे ही बरसे—

जाव बदरिया बरसो री,
वीरन के देसा में,
काना हो भर गए तला तलैयाँ ?
काना भर गए ताल,
ससुरा के देसा मे भर गए
तला हो तलैया.
वीरन के देसा मे ताल।
बदरिया, बरसो री,
वीरन के देसा में।
काना हो पज गए कोदों जू कुटकी,
काना पज गए लाँजी धान।
ससुरा के देसा में कोदो जू कुटकी,
वीरन के देसा मे लाँजी धान।
जाव बदरिया बरसो री,
वीरन के देसा मे।

बदरिया मेरे भाई के देश में जाकर बरसो।

किसके देश में तला और तलइयाँ भर गई हैं और किसके देश में ताल भर गए है ?

ससुर के देश में तला और तलइयाँ भर गई है तथा भाई के देश मे सारे तालाब भर गए है। प्यारी बदरिया ! मेरे भाई के देश में ही जाकर बरसना। ससुर के देश में कोदों और कुटकी खूब हुए है। भाई के देश में लाँजी चावल खूब पके हैं।

जिसके देश मे कोदों और कुटकी हुए है और जिसके देश में लाँजी चावल पके हैं ?

इन पक्तियो मे बहन का प्रेम कितना सप्राण बना है।

कुछ दूरी पर निशा की स्तब्धता को मग्न करती हुई एक वधू धीमे स्वर से गाती हुई भूल रही है। उसके स्वर मे गहरी कसक है क्योंकि उसका जीवन-साथी भरे सावन में जोगी बन गया है।

सइयाँ जोगि या भए।
हम हूँ जोगिन होय।
साँप ने छोडी केंचुली,
अर नदियाँ ने छोड़ी कगार…
सइयाँ ने छोडी,
नौ…नी…धनिया…रे।
सो दु.ख सहो री ना जाय,
संइयाँ जोगिया भए।

—सैयाँ जोगी बन गए हैं, मैं भी जोगिन बनूँगी। साँप ने केंचुली छोड़ दी है और नदी ने कगार का परित्याग कर दिया है। सैयाँ ने सुन्दर नारी को छोड़ दिया है। यह दुःख मुझसे नही सहा जाता।

एक सुन्दर झूले पर अपनी ननद के साथ मिचकियाँ भरती हुई एक गोरी गा रही है। ये बारहमासी के स्वर है—

चैत चिते चहुँ ओर रही मैं हारी।
बैसाख न लागी
आँख बिना गिरधारी।
जेठ जलै अति पवन,
अगनि अधिकारी।
आसाढ़ में बोलो मोर,
सोर भयो भारी।
साउन में बरसे मेउ,
जिमी हरियारी।
भँदवा की रात डर लगै,
झिकी अँधियारी।
कुँवार मे करे करार,
अधिक गिरधारी।
कातिक मे आए ना स्याम,
सोच भए भारी।

अँगना में भम्रो म्रदेस,
मोय दुख भारी ।
पूषा मे परत तुसार,
भीज गई सारी ।
मधवा मे मिले नंदलाल,
देख छबि हारी ।
फागुन में पूरन काम,
भए मुख भारी ।

सावन मे ससुराल जाना प्रत्येक विवाहिता को अखरता है। यह मास तो माता की गोद मे बैठने का है। मेघों की रिमझिम के साथ अपने नेत्रो से आँसू बहाने वाली एक युवती सावन मे विवश होकर ससुराल जा रही है। उसकी हरेक साँस मायके को छोड़ना ही नही चाहती। किन्तु नारी की परवशता को कौन समझे !

निबुला तरें डोला धर दे मुसाफिर,
आई सावन की बहार रे।
अबकी सावन मैं झूल न पाई,
जानै पडी ससुराल रे ।
जल बिच चमकै उजरी मछरिया,
रन में चमके तलवार रे।
घोड़िला पै चमके पिय की पगड़िया,
सिजिया पै बिंदिया हमार रे।
मोरे पिछवारे एक बगिया लगत है,
निबुला नरंगी अनार रे ।
कच्ची कलिन हाय सुअना कतर गयो,
अगिया मे पड़ गम्रो दाग रे।

हे मुसाफिर! नीबू के पेड़ के नीचे डोले को रख दे। सावन की सुहावनी बहार आ गई है। इस साल मैं सावन में न झूल सकी और मुझे विवश होकर ससुराल जाना पड़ा। जिस प्रकार जल में मछली है तथा रण मे तलवार चमकती है, इसी प्रकार मेरे प्यारे की पगड़ी दमकती है और सेज पर मेरी बिंदिया

चमक रही है। मेरे घर के पीछे एक सुन्दर बगिया है, उसमे नारगी और अनार के फल लगे हैं। दुख है कि कच्ची कलियो को तोते कुतर गए हैं और मेरी चोली में धब्बा लग गया है।

रसिया के बोल इस माह मे बड़े सुहावने लगते है। एक नवोढ़ा मुसकराती हुई गुनगुना रही है और उसकी सहेलियाँ उसके झूले को बार-बार झुला रही है—

रसिया आए, गरद उडी गोरी।
जब मोरे रसिया मेडे पै आए,
सूखी दूब हरियानी रे, गोरी।
जब मोरे रसिया कुवल पै आए,
रीते कुआँ भर आए रे, गोरी।
जब मोरे रसिया द्वारे पै आए,
मुतियन चौक पुराए रे, गोरी।

25

बुन्देलखण्डी कहावतों में पंच

कहावतें अनुभवी मानवों की सूक्तियाँ है। इनके द्वारा हम जनता की भावनाओ और विश्वासो का सुगमता से अध्ययन कर सकते है। हमारे विशाल देश में प्रचलित हजारो कहावतें हमारी संस्कृति और सभ्यता की परिचायिका है। यह सत्य है कि एक कथन को लोकोक्ति के रूप में आने के लिए बहुत समय लगता है। सत्य की कसौटी पर इसकी अनेक बार परीक्षा होती है और सफलता की आँच में इसे तपना पडता है। जिस प्रकार स्वर्ण के एक टुकडे को गहना बनने के लिए धधकती आग की उष्णता सहनी पडती है और सुनार के कलात्मक हाथ की हल्की तथा भारी चोटों का कष्ट झेलना होता है उसी प्रकार एक उक्ति को लोकोक्ति की परिभाषा में आने के लिए लोक की कठिन परीक्षा मे विजयी होना आवश्यक हो जाता है।

कहावत (लोकोक्ति) मे एक लोक-प्रचलित सत्य चित्रित रहता है और यही हमारा मार्गदर्शक बनकर एक समस्या का समाधान बन जाता है।

पंचो की महिमा और गरिमा के सम्बन्ध मे हज़ारों कहावते कही जाती है। इनसे प्रकट है कि हमारे गाँवो तथा नगरों में पचों को विशेष सम्मान से देखा जाता था और उनके निर्णयों में पूर्ण आस्था रहती थी। वे समाज तथा ग्राम के गौरव थे और उनके स्वर ही गाँव की वाणी बनते थे। हमारा वैदिक युग, ब्राह्मण युग, पौराणिक तथा रामायणयुग हमारी पंच-परम्परा का प्रतीक रहा है।

मैं यहाँ कुछ ऐसी बुन्देलखण्डी कहावतों का उल्लेख करूँगा, जिनमें पंच की महत्ता और लोकप्रियता के सम्बन्ध मे कहा गया है। बुन्देलखण्ड हमारे देश का एक इतिहास-प्रसिद्ध भूखंड है जिसका शौर्य, त्याग, बलिदान एवं गौरव आज भी इतिहासों के पृष्ठों में मुखरित है। प्राचीन काल में बुन्देलों से शासित इस भू-भाग में बुन्देलखण्डी बोली का व्यवहार होता था जो आज भी प्रचलित है।

एक कहावत में कहा गया है कि 'पाँच कहैं सो साँच'—जो पच कहते हैं वही सत्य है क्योकि 'पच के मों से भगवान् बोलत हैं' अर्थात् पच के मुख से भगवान् बोलते है। खड़ी बोली मे कहा जाता है कि पच के मुंह से ईश्वर बोलता है। पंचो के निष्पक्ष न्याय के सम्बन्ध मे कहावते प्रसिद्ध है—

1. पच करै सो न्याव। बड़ बोलै सो राव। (पचो का निर्णय ही सच्चा न्याय है। बड़े बचन बोलने बाला राव होता है।)

2. पच के न्याय में दोस कैसो ? (पंचो के निर्णय मे दोप बताना भूल है।)

3 पच वचन परमान, जो चाहो कल्यान। (भलाई चाहने वाले को पचों के निर्णय को मानना ही चाहिए।)

4. पंचराजा जे कैहैं सो सरमाथे। (पंचराजा जो कहेंगे वह सबको मान्य होगा।)

5 पंच जो कछु कैत है सच्ची कैत है। (पच जो कुछ कहते है सच्ची ही कहते हैं।)

पंच की गरिमा तथा प्रभुत्व बताने के लिए ये लोकोक्तियां कितनी प्रामाणिक है—

1. पच के आँगें सबको माथा झुकत है। (पंच के आगे सबको झुकना पड़ता है।)

2 पहार हिल जाय मनों पंच नइँ हिलै। (पहाड़ हिल जाए तो हिल जाए लेकिन पच नही हिल सकता।)

3. पच को बोलबो और सिंह को दहाडवो बिरोबर होत। (पंच का बोलना और सिंह का दहाड़ना बराबर है।)

4. पचों के आँगे सब खों साँच कहने परत है। (पंचो के आगे सबको सत्य बोलना पडता है।)

5 पंच की मरजी सो गाँव की मरजी। (पंच की इच्छा में गाँव की इच्छा रहती है।)

6. पंच को हुँकारो, फौज मे नगारो। (पच की हुकार फौज के नगाड़े के समान होती है।)

7. पंचों के मों लगबो ठीक नइयाँ। (पचों के मुँह लगना उचित नही है।)

8. पच सें बिगाड़ सो राम से बिगाड़। (पंच से दुश्मनी करना मानो भगवान् से दुश्मनी करना है।)

9. भगवान् की टर जाय पै पंच की नइँ टरै। (भगवान् की बात टल सकती है लेकिन पच की नही।)

10. पच की पगड़ी मे गाँव की पगड़ी। (पंच के सम्मान मे ही गॉव का सम्मान रहता है।)

पंच को सर्वज्ञ होना चाहिए तभी वह सच्चा न्याय कर सकता है। कहा भी है—

सब बातन को जाननहार।
सोई पंच बडो सरदार।

सच्चा पच जनता के मानस मे निवास करता है और इसीलिए वह लोक-प्रिय भी होता है। कहावत प्रसिद्ध है कि 'पंच मरै तो गाँव रोवै।'

26

उठी तो बदरिया झुमकन लागी

वर्षा की पहली बौछार जंगल मे नई सिहरन उत्पन्न कर देती हैं। मयूर पर्वतों के शिखरो पर चढकर 'मे आग्रो' की टेर लगाने लगते हैं और प्रमुदित विहग वृक्षों की शाखाओ पर बैठकर रसभरी बोलियो को बोलकर पावस का स्वागत कर उठते है। नवयुवक गाँवों की सीमाओं को भूलकर अल्हडपन के साथ खेतो में खड़े होकर सैरे गाते है और पशुओं को चराने वाले ग्वाले मुरली बजाकर डाँगे (जगल) मे इधर-उधर घूमने वाली किसी युवती को देखकर विरहा के बोलो को सुनाते हैं अथवा टप्पा की छोटी-सी पक्ति को दुहरा-दुहराकर अपने सुरीले कठों की मधुरिमा से प्रेम की स्वच्छन्द अनुभूतियों को जगाने लगते है। उधर आकाश मे काले मेघ छा जाते है और इधर कृषकों के मन भूली हुई कजरारी अँखियों की याद करके बेचैन हो जाते है। कभी-कभी युवको के दो दल कुछ दूरी पर खडे होकर सैरे गाते है और प्रश्नोत्तर के रूप मे जीवन की अनसुनी बातें सुना डालते हैं। सुनने वाले होते है पशु-पक्षी अथवा मद-मंद गति से बहने वाले झरने और खेतों की मेड पर घास छीलती हुई सुन्दरियो के रसीले मन। इस जगल की शायरी में मानव की सुकुमार भावनाएँ बडी मार्मिकता से चित्रित होती है और गोरी का कुँवारा यौवन इसी काव्य के माध्यम से गुलाब के फूल की भाँति खिल उठता है। धरती की सौंधी महक पाकर सचमुच सैरो की लघु पक्तियाँ बड़ी मनभावनी बन जाती हैं। कान पर एक हाथ रखकर जब नौजवान का स्वर झूमता हुआ आगे बढ़ता है तब सिरों पर घास के बोझो को रखकर चलती हुई रमणियो के आतुर पग अनायास ही डगरिया (रास्ते) के मोड़ों को भूल जाते हैं और कुछ क्षणों के लिए रुककर वातावरण की कोमलता का स्वाद लेने लगते हैं। सैरे पावस के गीत हैं लेकिन लम्बी यात्रा (सफ़र) की थकान को भुलाने के लिए भी पथिक इन्हे गाते हैं।

'अरे हाँ' से सैरे का प्रारम्भ होता है और लम्बी तान के साथ इनकी समाप्ति कर दी जाती है !

सुनिए, नदिया के किनारे पर खडा हुआ एक चमार गा रहा है कि बदरिया झुमकने लगी है और वर्षा की बूँदे बडी-बड़ी होती जा रही है। गूजर की बेटी गोबर कर रही है और उसके गले की हमेल न मालूम क्यों नहीं चमकती है—

अरे हॉ रे—उठी हो बदरिया
झुमकन लागी।
झुमकन बरस रहे देय।
गूजर की बिटिया गोबर करै।
बाकी हेल चाव नहिं धेय।

एक युवती काली बदरिया से प्रार्थना करती है कि वह जी खोलकर बरस उठे जिससे कि विदेश जाता हुआ उसका कत घर में ही रुक जाय।

अरे हाँ रे—कारी बदरिया तौरी पइयाँ परौ,
कौन्दा बीरन के बल जॉय।
आज बरस जा मोरे देस मे
मोरो कत घरै रह जाँय।

हे प्यारे ! ज्वार और बाजरा न बोना, उनकी रखवाली कौन करेगा ? मैं तो मायके चली जाऊँगी और तोते बाल लेकर उड़ते फिरेंगे।

अरे हाँ रे—जुनरी बाजरा पिया मोरे जिन बइयो।
को रखबरिया जाय।
हम दुर जइहैं अपने मायके।
तेरी सुआ बाल ले जाय।

हे सास ! वज़नदार पेजनियाँ और रत्नों से जड़ी हुई चोली मुझे मँगवा दो। मैं कब से प्रार्थना कर रही हूँ—

अरे हॉ रे–सास मोय लै दीजै वजन घुघरिया
लैदे अँगिया मोय।
चुलिया लैदे रतन जड़ाव की,
जीमे लिखै पपइरा मोर।

शत्रुओं का आक्रमण सुनकर एक वीर बुन्देला तलवार लेकर लड़ने के लिए

जा रहा है। पत्नी कहती है कि "नाथ! तेल की फरिया (छोटी साडी) अभी फटी ही नही है, न हल्दी के दाग मिटे है। पैरो की मेंहदी अपने रग मे ही चमक रही है। फिर मुझे छोडकर आप अभी कहाँ जा रहे है?

अरे हाँ रे—
तेल की फरिया मोरी फाटी ना,
ना छूटे हरद के दाग।
पाँइन मैंदी मोरी छूटी ना,
कथा मरन चले परदेस।

बावले प्रियतम, ठहर जा! मूँग की दाल मैंने धो ली है। कम से कम आज तो ठहर जाइए। इस प्यार की ज्योनार को मत ठुकराइए।

अरे हाँ रे—
कंथा मोरे धोई धाई,
धोई धरी मूँग की दार।
आज बिलम जा कथा बावरे,
तुम जेब लौ जौनार।

सावन मे मुरली की टेर प्रिय लगती है और भादों मे मोर का बोलना आनन्द-दायक होता है। वही नारी प्यारी लगती है जिसके घर के दरवाज़े पर उसके प्यारे पुत्र खेलते है—

अरे हाँ रे—
सावन सुहावनी मुरली लगै,
भदुवा सुहावनी मोर।
तिया तो सुहावनी तब ही लगै,
जब ललना खेले पीर की दौर।

अन्नों मे ज्वार श्रेष्ठ है। गायो में सफेद गाय ही उत्तम है। रानियों में फूल-कुमारी प्रसिद्ध है तथा राजकुमारो में उदयराज ही हमेशा आदर पाते हैं—

अरे हाँ रे—
अन्नन मे नौनी जुनरी लगे,
गौअन में धौरी गाय।

रानिन मे नौनी फुलवा लगै,
कुँवरन में नौने उदैराय।

सुन्दरी की बड़ी-बडी अखियो के लिए इससे अधिक और क्या कहा जा सकता है—

अरे हाँ रे—
रतनारे है नैना, भँवर कजरा,
बडी-बडी अखियाँ थोरो थोरो कजरा।
मानें जे फेरे है चन्द बदरा।
रतनारे है नैना भँवर कजरा।

भक्तिपरक सैरो मे भी मानवीय अनुभूतियो का ही अकन हुआ है। सीता के कोमल हाथ है और उनका शरीर भी अत्यन्त मुलायम है। वह जगल मे एकाकिनी खडी होकर विलाप कर रही है कि रघुवीर ने तो उन्हे भुला ही दिया है—

अरे हाँ रे—
सीता की लरम हतुलियाँ,
कोमिल अंग सरीर।
ठाड़ी बिसूरे कारी डाँग मे,
सुरत भूल गए रघुवीर।

वर्षा की रिमझिम मे गाये गए ये सैरे मानव-जीवन के वास्तविक चित्र है जो बड़े ही मनोरम एवं मादक है।

27

बुन्देलखण्डी लोक-कथाएँ

बुन्देलखण्ड के लोक-गीत जैसे रसीले है वैसी ही यहाँ की लोक-कथाएँ रसभरी हैं। इन्हे सुनकर सुनने वालों के सिर प्रसन्नता से झूमने लगते है और वे कथा कहने वाले की बार-बार तारीफ कर उठते है। इन कथाओ मे मनोरंजन के साथ-साथ अनेक शिक्षाएँ छिपी रहती है और ऐसे सुन्दर उपदेश इन कहानियो से मिलते है कि श्रोताओ की आँखे खुल जाती है और वे बुरे कामो से दूर रहने की प्रतिज्ञा कर लेते है। बच्चे तो इन मनोहर कथाओ को सुनने के लिए अपनी दादियों, काकियों और माताओ को हमेशा परेशान करते रहते हैं।

बुन्देलखण्डी कहानियो मे पशु-पक्षी मनुष्य की बोली बोलते हैं और आवश्य-कता पड़ने पर एक-दूसरे की सहायता भी करते हैं। यहाँ शेर और गाय एक ही साथ रहते है और गाय गाँव की कहानियाँ शेर को सुनाती है और शेर जंगल के भूतो की कथाएँ सुनाकर गाय को प्रसन्न करता है।

इन प्यारी कहानियो मे बताया गया है कि पाप का फल बुरा और पुण्य का फल अच्छा होता है। अच्छे काम करके चमार स्वर्ग में जाता है और बुरे काम को करने वाला ब्राह्मण नरक मे जाकर हजारो वर्षो तक दुख भोगता है। 'पुण्य की जड पाताल नो', 'कपिला गाय' 'नेकी को फल नेकी', 'पसीने की कमाई', 'धरमात्मा राजा' और 'बरदानी शंकर बाबा' शीर्षक कहानियो मे कहा गया है कि दीनों की सहायता करने वाले मनुष्य सदा सुखी रहते हैं और उन पर भगवान् हमेशा कृपा करते है।

कथा कहने वाला जब बीच-बीच मे दोहा और चौबोला कहने लगता है तब श्रोताओ को अधिक आनन्द आता है। पद्यो से भरी हुई कहानियाँ सचमुच बड़ी मनोरंजक होती है। 'चतुर चिरैया', 'चिराने', 'मारी लात', 'चिरई रिस चली', 'तीन ठग', 'राजा भोज मूसरचन्द', 'पढ़ा-लिखा बढ़ई', 'गानेवाली राज-

कुमारी' एवं 'कवियो की भिड़न्त' ऐसी ही कहानियाँ है। इनमें पद्यों का समावेश इस प्रकार किया गया है कि सुनने वाले कविता का मज़ा लेते है।

चतुर चिरैया लाठी काकी से कहती है—

लाठी काकी, लाठी काकी,
तै तौ कुत्तै मारै।
कुत्ता न बिल्ली खावै।
बिल्ली न चूहा पकरै।
चूहा न कपडा कुतरै।
रानी न राजा रूठै।
राजा न बाढई डाँटै।
बाढई न खूँटा फाड़ै,
खूँटा फाड़, चनूटा काढ,
मै चब्बो का।

'तीन ठग' नामक बुन्देली लोक-कथा में सारंगी वाला बजाता है—

छप कौ नारौ बडो अताई।
तीन चोर नौ कथक नचाई।

तबलेवाला तबले से आवाज़ निकालता है—

तबला बजै धीन-धीन।
तब एक को मारै तीन-तीन।

तबले के बोल को सुनते ही तीनों ठगों की अच्छी पिटाई की गई।

बुन्देली कथाओं में बुन्देलखण्ड के रीति-रिवाज, अन्ध-विश्वास, खान-पान वेशभूषा और आचार-विचार बड़े सुन्दर ढंग से उभरे है। बुन्देलों का वीरत्व तो इन कहानियो में साकार हो गया है।

सर्दी की लम्बी रातों में ब्यालू करके गाँव वाले कोड़े के पास बैठ जाते हैं और फिर कथाएँ प्रारम्भ होती है। एक कहता है और अनेक सुनते है। सुनने वालों में से एक हूँकारा देकर बताता है कि सुनने वाले पूरे सावधान है। कहानी कहने के पहले कथक उत्सुकता बढ़ाने के लिए कुछ ऐसी अटपटी बातें कहता है कि जिन्हें सुनकर कहानी के लिए सुननेवालों का चाव बढ़ता है। वह गला साफ करने के लिए ज़ोर से खखारता है और चिलम पीकर कहने लगता है—

किस्से-सी झूठी ना बात-सी मीठी न घड़ी-घड़ी के विश्राम, को जाने सीता-राम। न कैबे वारे को दोष, न सुननेवारे को दोष। दोष तो उसी को जीने किस्सा बनाकर खडी करी। और दोष उसी को भी नही। कायसे ऊने रैन काटवे फेलाने बनाके खड़ी करी।

शक्कर की घोड़ी शकलपारे की लगाम चढ़ बैठे गुलगुलिया पठान, छोड दो दरिया के बीच चला जाय छमा-छम-छमा-छम। इस पार घोड़ा, उस पार घास, न घास घोड़ा कौ खाय, न घोड़ा घास कौ खाय। हाथ भर ककड़ी, नौ हाथ बीजा। होय होय खेर गुन होय। जरिया कौ काँटौ अठारह हाथ लम्बों। आधो छिरिया ने चर लव, आधे पै बसे तीन गाँव। एक ऊजर, एक खूजर, एक में मानसई नैयाँ। जी मे मानस नैया, ऊमें बसे तीन कुम्हार। एक टुंडा, एक लूला, एक के हाथई नैयाँ। जी के हाथ नैयाँ, ऊने चोटई ने आई ऊमे रची तीन हडियाँ। एक ओगूँ, एक बोगूँ, एक के ओठई नैयाँ। जीमें ओंठ नैयाँ ऊमें चुरेए तीन याँवर। एक अच्चो, एक कच्चो, एक को चोटई ने आई। जीमें नेवते तीन वामन। एक अफरो, एक डफरो, एक कों भूखई नैयाँ। जो इन वातन को झूठी जाने तो राजा को डाँड और जात को रोटी देय। कहता ठीक है पै सुनता सावधान चाहिए।

'हाँ भज्जा (भैया) ! अब तो कहानी हो जाय' की आवाज़ सुनते ही कथक कहानी कहने लगता है और कहते-कहते जब वह किसी राजा का वर्णन कर उठता है तब तो श्रोताओं की तबीयत फड़क उठती है। कथा कहने वाला सीना तानकर कहता है—"एक राजा हतो। वह कैसा था? गुलाब कैस फूल, शेर कैसो बच्चा, सूरज कैसी जोत, भौरा कैसे बाल, सोने कैसो रंग, सिर पै जरी को मडील बाँधे, ऊपर से कीमखाब का अगा और मिशरू का पैजामा पहने। कमर मे रेशमी फेटा बाँधे, जीमे चाँदी की मूँठ को नक्कासीदार पेश कब्ज खुसोमश्रो, कान में मोतियन के बड़े-बड़े बाला, गरे में सूबेदारी कण्ठा, हाथ की अँगुरियन में जड़ाऊ अँगूठी शोभा दे रई, मुँह मे पान को बीरा दाबे, पाँवन मे लड़ी को चरिटेदार जोड़ा पहिने, छैल-छबीला गबड़ू ज्वान। देखते भूख भगे। इस प्रकार कथक रानी, बरात, पनघट और हाट के सुन्दर वर्णनों के साथ कहानी को समाप्त करके संसार के कल्याण की कामना करता है, और कहता है कि जैसे कहानी के नायक के बुरे दिन सुख में बदले, उसी प्रकार सब के दिन

बदले।

बुन्देली कथाओं के अनेक रूप है। कुछ ये है—राजा-रानी सम्बन्धी कथाएँ, भूत-प्रेत सम्बन्धी कथाएँ, पशु-पक्षी सम्बन्धी कथाएँ, साधु-पीरों का कथाएँ, परियों की कथाएँ, बुझौवल सम्बन्धी कथाएँ, चोर-डाकुओं की कथाएँ, व्रतों की कथाएँ, गीत कथाएँ, वीरों की कथाएँ, जादू-टोने की कथाएँ, सर्पों की कथाएँ, देव-दानवो की कथाएँ, भाई-बहन की कथाएँ तथा हास्य कथाएँ।

यह प्रसन्नता की बात है कि बुन्देली लोक-कथाओ को अनेक विद्वान सग्रहीत कर रहे है।

बुन्देलखण्ड की पावन धरती पर फैली हुई ये लोक-कथाएँ बडी ही रोचक और मनोहारिणी है। इनमे चित्रित बॉकुरे बुन्देलों का आदर्श बलिदान तथा प्रेम सदैव स्मरणीय रहेगा।

28

ऐसी पिचकारी की घालन कहाँ सीखलई, लालन

मानव स्वभाव से आनन्दप्रिय है। उसकी समस्त प्रवृत्तियाँ एवं प्रयास आनन्दोन्मुखी होते हैं। उल्लास से उसे सहज स्नेह है और विषाद को वह पल-पल में भूल जाना चाहता है। इसी सुख-भोगी भावना से प्रेरित होकर मानव ने इस चराचर विश्व में ऐसे अनेक अवसरो को खोज निकाला है जिनमें वह अपनी लोलुपता और वासना को सप्राण बनाकर स्वय को आनन्दित करता है और समाज को भी आनन्दविभोर कर देता है।

होली आमोद-प्रमोद की प्रतिमा है। इसके आगमन की संभावना ही मानस को रसमय बना देती है। जिस प्रकार कुसुमित कलिका रसिक भ्रमर को प्रमुदित करती है उसी प्रकार होली की रंगीन और सुरभित हवाएँ मानव-मन को अनायास भी प्रमत्त बनाकर लोक-मर्यादा की परिधि से आगे बढ़ने के लिए विवश कर देती हैं। कौन ऐसा हृदय होगा जो ढोलक, मजीरो और झाझों के मधुर स्वरों को सुनकर थिरकने न लगे?

छतरपुर के निवासी कविवर गगाधर कहते है कि होली के अवसर पर तो सबको अपने मन की ललक पूरी कर लेनी चाहिए—

"मन मानी छैल करो होरी।
सब लाज-सरम डारौ टोरी।
महिना मस्त लगो फागुन कौ,
अब न कोउ दै है खोरी।
अब डर नही पुरा पाले कौ,
लड़ै न सास ननद मोरी।
लिपट लिपट ऊपर रंग डारौ,
मलौ कपोलन पै रोरी।

'गंगाधर' ऐसे औसर में,
मन की ललन पुजै तोरी।

होली सबके मन की कामना को पूर्ण करती है। लोक-कवि 'मनभावन' ने इसी सलोने समय मे राधिका और मोहन के प्रेम-बन्धन को सुदृढ होते देखा था।

हित लागो कुँवर किसोरी को,
मोहन से राधा गोरी को।
चलन लगो दिन पै दिन मारग,
नए नेह की डोरी को।
दरसत बक बिलोकन मे हो;
मजा कछू चित चोरी को।
बढ़त अनद चन्द मुख निरखत,
जैसे चित्त चकोरी को।
मनभावन सुख पूर होंय सब,
समयो पाके होरी को।

होली के आते ही प्रकृति का आनन और नीरस कानन विविध रंगों के फूलों से दमकने लगता है। पक्षियों का कलरव नई उमगो को मधुरिमा मे डुबो देता है और अमोली के पुष्पों से बागो के विटप बड़े ही मनोरम लग उठते हैं। लाल कवि ने तो इस हुलास के अवसर पर बिना गोली के तमंचे को चलते देखा है—

रंग रश्रो वसन्ती चोली को,
मौसम आगओ होली कौ।
बागन विटप बगलन बागन,
फूलो फूल अमोली कौ।
पंछी सबै सग मिल डोलै,
सोर मचावे बोली को।
कहैं कवि लाल वसन्त तमचा,
चलन लगो बिन गोली कौ।

इसी होली के छींटों की सहज सिंहरन से पुलकित होकर ही न मालूम कितनी गोपिकाएँ मनमोहन की हो गई थीं!

जो मन मनमोहन से अटको,
भूल गयो सब खटको।
उरझ गयो सुरझत अब नाही,
कोट जतन कर झटको।
गुरुजन पुरजन, कुलजन बरजत,
ना मानत है हटको।
निस बासर विसरत ना सजनी,
मिलवौ जमुना तटकौ।
'रामप्रसाद' मन बसो हमारे,
रंग पीताम्बर पट कौ।

कहा जाता है कि होली के अवसर पर ही तो राधिका रानी ने महाराजा मदनदेव के इजलास मे मोहन के ऊपर दीवानी का दावा किया था और पूरी डिग्री प्राप्त की थी—

अरजी दई राधिका रानी,
कर निज हाथ निशानी।
लश्रो लिखाय वकालतनामा,
ललित सखी सयानी।
पेशकार इजलास खास मे,
मदन भूप रजधानी।
इच्छा के इजहार लिखाये,
रूप शहादत सानी।
'अवधलाल मोहन के ऊपर,
कर दई दिल दिवानी।

गोकुल की होली की बरजोरी एव मादकता भुलाने पर भी नही भुलाई जा सकती। बरसाने की पिचकारियों से जिनका मृदुल शरीर एक बार भी रगीन बन चुका है, उनकी आत्मा तो सदैव बरसानेवाली राधिका की हवेली के पास ही रहा करती है। बुन्देलखण्ड के लोक-प्रिय कवि ईसुरी द्वारा चित्रित होली खेलती हुई राधा का यह चित्र कितना मनोहर है—

राधा स्वामलिया खाँ घेरे,
होरी होय सबेरे।
एकें लिये फूल का गजरा,
एकें करखा जौरे।
उडत गुलाल लाल भर बादर,
नंद बबा के दौरे।
एकें स्वरवी अतर लिये गडी,
एकें केसर घोरे।
ईसुर धूम धमारन माची,
ब्रज गलियन की खोरे।

रसिक-शिरोमणि मुरलीधर की कला-चातुरी का विवरण होली के गीतों मे अधिक मिलता है। इसी विवरण के माध्यम से माधव की मधुरता अनेक रूपों में पुष्पित हुई है। पिचकारी छोड़ने की एक भावभरी मुद्रा का अवलोकन कीजिए—

ऐसी पिचकारी की घालन
कहाँ सीख लई, लालन।
तक के तान दई बेदा पै,
ढुरक लगी है गालन।
अपुन फिरें रंग रस में भीजे,
भिजै रहे ब्रज बालन,
मारी चोट ओट लै कड़ गई,
लगी करेजे सालन।
माधौ बनी राधिका 'ईसुर'
राधा बनी गुपालन।

होली के ये मधुरतम स्वर जीवन की सुखद कहानी के अनिश्वर बोल है, जो नभ की नीलिमा के समान मदिर और उषा की लालिमा की भाँति राग-रजित हैं।

29
लोकोक्तियों में बीज-चर्चा

महर्षि पराशर ने कृषि की प्रशंसा करते हुए कहा है—

अन्नं तु धान्य संभूतं धान्यं कृष्या विना न च।
तस्मात्सर्वम्परित्यज्य कृषिं यत्नेन कारयेत्।

भोजन की प्राप्ति अन्न से होती है और अन्न खेती के बिना मिल ही नही सकता। इसलिए सब कामों को छोड़कर मानव को चाहिए कि वह यत्न से खेती करे।

जीवन की आधारभूति कृषि की सफलता शुद्ध बीज पर ही अवलम्बित है। खाद से परिपूर्ण खेत मे तभी सुन्दर फसले उग सकती है जब शक्ति-परिपूर्ण बीज बोया जाय। सड़े-गले बीजों को बोकर किसान कभी भी अपने मनोरथ में सफल नहीं हो सकता। घुना बीज धरती मे मिलकर धूलि बन जाता है क्योंकि शक्तिहीन होने के कारण उसमे वृक्ष बनने की ताकत रहती ही नहीं है। सर्वगुण सम्पन्न बीज ही स्वय को मिटाकर अनेक प्रकार की यातनाएँ सहकर हरे-भरे पौधे के रूप में प्रकट होता है और अपने जीवन को सफल बनाता है। ऐसी स्थिति में हमारे अनुभवी किसान भाइयों ने खाद से अधिक बीज को महत्त्व दिया है।

लोक-कवि घाघ का कथन है—

ओछो मंत्री राजे नाजै, ताल बिनासै काई।
सड़ा बीज तो खेत बिनासै, घग्घा पैर बिवाई।

—नीच मंत्री राजा को मिटाता है और काई तालाब को खराब कर देती है। घाघ कहते है कि सड़ा बीज खेत के सौन्दर्य को नष्ट कर देता है तथा बिवाई पैर को गतिहीन बना देती है।

इसी प्रकार वह किसान भाग्यहीन माना गया है जिसके पास अच्छा बीज न हो।

ढीठ पतोहू धिया गरिहार।
खसम बेपीर न करै बिचार।
घरे जलावन, बीज न होई।
घाघ कहै सो अभागी जोई।

कच्चे बीज बोने वाला कृषक उसी प्रकार खेती मे असफल होता है जिस प्रकार अकेले मार-पीट करनेवाला भ्रमक हारता है।

यकसर खेती यकसार मार।
कच्चा बीजा सदहूँ हार।

कहा जाता है कि अधकचरी विद्या, असावधान नृपति एव कपास का खेत अपना अस्तित्व बहुत समय तक सुरक्षित नही रख सकता। किसानों की धारणा है कि घुना बीज खेत के सौन्दर्य को नष्ट करके उसे वैभव-विहीन कर देता है।

अधकचरी विद्या दहे, राजा दहे अचेत।
घुना बीज खेती दहे, दहे कलर का खेत ॥

कृषि मे प्रवीण हमारे ग्राम-भाई पूरे परीक्षण के बाद ही बीज को लेते है और उसे सुव्यवस्थित रूप मे रखते है। उनका विचार है कि चोखा बीज ही खेत को सुनहली फसलों से भरता है तथा निर्दोष बीज सौगुना फलता है। धरती को माता बनाने वाला स्वस्थ बीज ही है। जिस प्रकार हीरा चमकता है उसी प्रकार स्वस्थ बीज खेत में पड़कर सबको आकर्षित कर लेता है। बीज-विषयक कुछ कहावते ये हैं—

(1)

चौखा बीजा खेती घनी।
पन्ना धरती देवै मनी।

(2)

सच्चो बीज फलै सौगुना,
धन उपजावै कई गुना।

(3)

बीज विधाता। धरती माता।

(4)

बीज बोना सुन्दर, रात सोना अन्दर।

(5)
स्वस्थ बीज हीरा-सा चमकै।
पड़ा खेत में हरदम दमकै।

(6)
बीज की परख करै गुणवन्त।
धरती परख करै किसवन्त।

(7)
पहले राखै घर मे बीज।
तब बीजन का करि तजबीज।

(8)
बीज परे फल अच्छा देत,
जेतना गहरा जोतै खेत।

(9)
पतरो बीज सदा दुखदाई।
घुनो बीज की उपज न आई।

(10)
बने बीज के बये खेत में,
चमत्कार लग जाई।

(11)
जैसो बीज तैसी फसल।
मोटी बीज मोटी फसल।

(12)
ईख तिस्सा।
बीज मिलै सौ बिस्सा।

(13)
बीज परखिए चारी।
धोखा रहे न भारी।।

(14)

बीज बिना खेती है कैसी।
बिन बरखा के धरती जैसी ।।

इस प्रकार इन कहावतों मे जो सिद्धान्त बीज के सम्बन्ध में स्थापित किये गए है वे निस्सन्देह बडे ही उपयोगी है । इनकी समीचीनता को सिद्ध करने के लिए विज्ञान भी मौन नही है। अनुभव के द्वारा व्यवहार-प्रवीणो ने एकमत होकर स्वीकार किया है कि वही गृहस्थ आजीवन सुखी रहता है जिसके पास 'बारह बकार' हो। इन बारह बकारो की गिनती मे दूसरा स्थान बीज का ही है।

बाँध, बिया, बेकहल, बनिक, बारी, बेटा, बैल ।
ब्योहर, बढई, बन, बबुर, बात सुनो यह छैल ।
जो बकार बारह बसै, सो पूरन गिरहस्त ।
औरन को सुख है सदा,
आप रहे अलमस्त ।।

बीज की उपयोगिता को ध्यान में रखते हुए हमारे किसान भाइयों को शासन द्वारा स्थापित बीज-भण्डारों से शुद्ध बीज लेकर अपनी खेती को समृद्ध बनाना चाहिए। 'शुद्ध बीज की परख', 'बीज बोने का परिमाण' एवं बुवाई की रीतियाँ शीर्षक लघु निबन्धों में मैं शीघ्र ही उन सफल कृषकों की प्रवीणता को प्रदर्शित करूँगा जो वास्तव में हमारे अन्नदाता है और सच्चे धरती के पुत्र बनकर कृषि-कार्य में तल्लीन हैं। खेती को ही सर्वोत्तम मानकर हमारे युवकों को अब ग्रामों की ओर जाना चाहिए जहाँ हमारी भारत माता निवास कर रही है।

उत्तम खेती मध्यम बान।
निष्कृष्ट चाकरी भीख निदान ।।